अगस्त 2000 Rs.10/-
चन्दामामा

Parry's®
Lacto
King
विटामिनों के साथ
Parry's®
Lacto
King
WITH VITAMINS
उछलता
मज़ा
HTA 7814 2000

चन्दामामा

सम्पुट - 102 अगस्त 2000 सञ्चिका-8

अन्तरङ्गम्

कहानियाँ

ज्ञानप्रद धारावाहिक

पौराणिक धारावाहिक

ऐतिहासिक विभूतियाँ

विशेष

इस माह की विशेष

महोन्नत आत्मा
(बेताल कथा)

रंगा की कहानी

प्रचुर स्वर्ण

भारत की गाथा

Printed and Published by B. Viswanatha Reddi at B.N.K Press Pvt. Ltd., Chennai-600 026 on behalf of Chandamama India Limited, Chandamama Buildings, Vadapalani, Chennai-600 026. Editor: Viswam

सबसे उत्तम

उपहार

आप अपने
दूर रहनेवाले करीबियों के लिए
सोच सकते हैं

चन्दामामा

उन्हें उनकी
पसंद की भाषा में एक
पत्रिका दें

असमिया, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़,
मलयालम, मराठी, उड़िया, संस्कृत, तमिल व तेलुगु

और उन्हें घर से दूर घर के
स्नेह को महसूस होने दें

शुल्क
सभी देशों में एयर मेल द्वारा
बारह अंक 900 रुपये

भारत में भूतल डाक द्वारा
बारह अंक 120 रुपये

अपनी रकम डिमांड ड्राफ्ट या मनी आर्डर द्वारा
'चंदामामा इंडिया लिमिटेड' के नाम भेजें
सेवा में :

PUBLICATION DIVISION
CHANDAMAMA INDIA LIMITED
CHANDAMAMA BUILDINGS, VADAPALANI, CHENNAI-600 026

संपादक
विश्वम

प्रधान कार्यालय :
चंदामामा प्रकाशन विभाग
चंदामामा बिल्डिंग्स
वडापलानि, चेन्नई - 600 026
फोन/फैक्स : 4841778
4842087
इ.मैल : Chandamama@ vsnl.com

मुंबई कार्यालय
2/B, नाज बिल्डिंग्स,
लेमिंगटन रोड, मुंबई - 400 004.
फोन : 022-388 7480
फैक्स : 022-388 9670

संस्थापक

चक्रपाणि, बी. नागि रेड्डी

आत्म-चिन्तन की घड़ी

यदि वर्ष २०००, नयी शताब्दी का आरम्भ है तो यह निश्चय ही एक महत्वपूर्ण वर्ष है। यदि यह बीसवीं शताब्दी का अन्तिम वर्ष है, तब भी यह कम महत्वपूर्ण नहीं है। क्योंकि यह वर्ष महत्वपूर्ण है, इसलिए इस वर्ष का पन्द्रह अगस्त का अवसर भी बहुत महत्व रखता है।

भारत ५३ वर्ष पूर्व एक स्वतंत्र राष्ट्र बन गया। द्वितीय महायुद्ध के समाप्त होने से कुछ ही वर्ष पहले की बात है। इस महायुद्ध में अनेक राष्ट्रों का सर्वनाश हो गया। जापान का उदाहरण द्रष्टव्य है। अणु बम से दो बड़े नगर बर्बाद हो गये। सारा देश राख का ढेर बन गया। किन्तु आज यह विश्व का एक सर्वाधिक विकसित देश है। हमारे निकट - पड़ोसी छोटे देश सिंगापुर के विषय में भी यही कहा जा सकता है।

फिर भारत ऐसा क्यों नहीं कर सकता? हमारे वैज्ञानिक और शिल्प-वैज्ञानिक पश्चिमी राष्ट्रों की समृद्धि में सहायक बन रहे हैं। हम उनसे क्यों नहीं लाभ उठा सकते?

उनका कहना है कि भारत में कुछ नहीं किया जा सकता। सरकारी तंत्र में न तत्परता है न सहानुभूति, यद्यपि उसकी निष्क्रियता के और भी अनेक कारण हैं। तब क्या हम हाथ पर हाथ रख कर बैठ जायें? हमारी जन-संख्या बढ़ रही है। समय-समय पर दैवी आपदाएँ नयी समस्याएँ खड़ी कर देती हैं। जब तक देश के विकास के लिए कार्य करने के प्रति राष्ट्रीय स्तर पर चेतना और संकल्प नहीं होता, तब तक हमारी दुर्दशा बनी रहेगी।

सरकारी तंत्र हम जैसे लोगों से ही, हमारे कुटुम्ब से ही बनता है। इसलिए राष्ट्र का भाग्य हमारे हाथ में है। हम चाहें तो इसे बना और चाहें तो बिगाड़ भी सकते हैं। यह निर्णय की घड़ी है। हमें अपने देश के लिए, अपने भविष्य के लिए ईमानदारी से कार्य करना होगा।
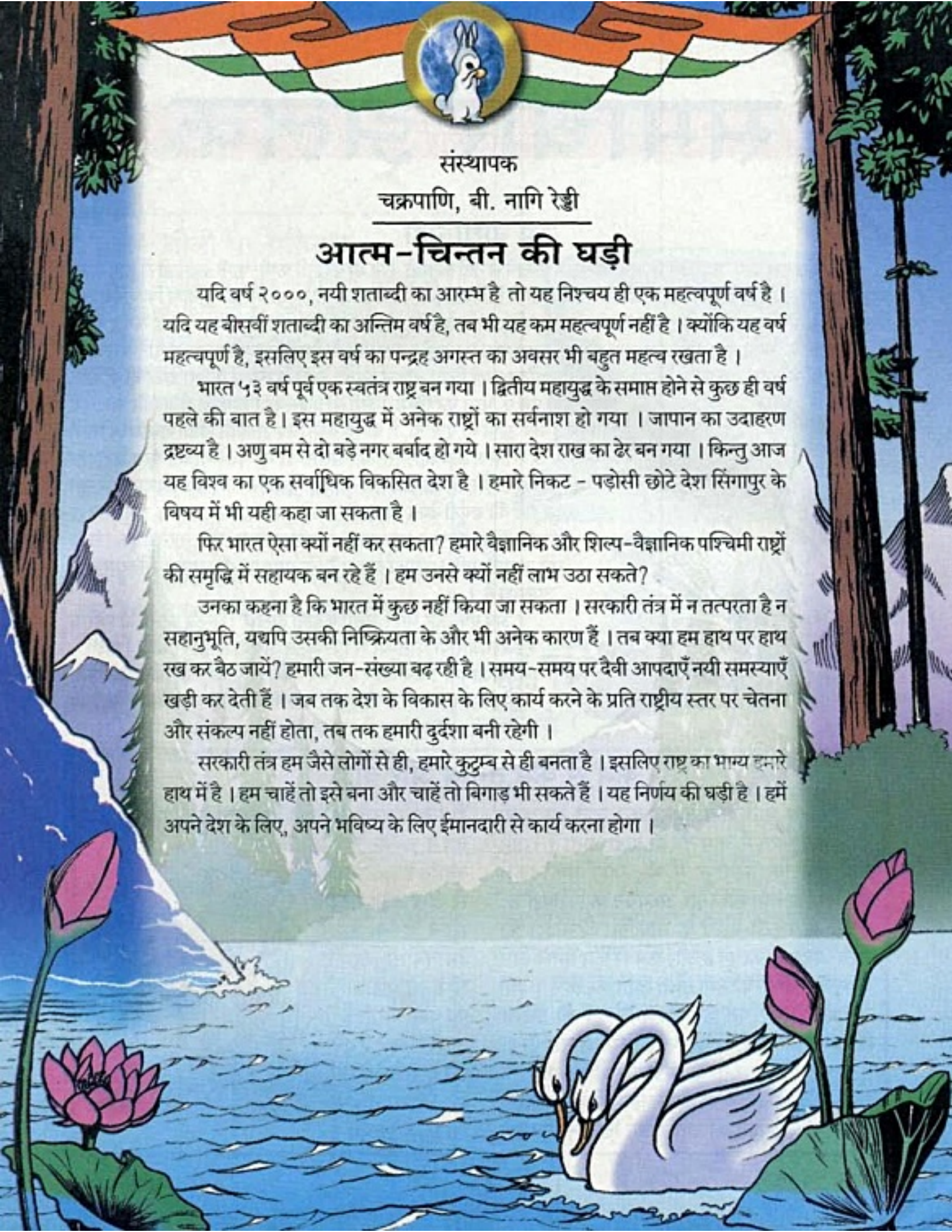
समाचार झलक

उम्र बाधा नहीं

आजकल बच्चे प्राय: कक्षाओं में जाने और पढ़ने लिखने से नहीं कतराते, फिर भी कुछ तो कभी-कभी कक्षाओं से भाग जाना चाहते होंगे। नई दिल्ली के राज किशोर पांडेय की कहानी से निश्चित रूप से उन छात्रों को प्रेरणा मिलेगी। दिल्ली विश्वविद्यालय के इस ४४ वर्षीय सुरक्षा गार्ड ने हाल में ही पी.एच.डी. की उपाधि के लिए अपना शोध प्रबंध प्रस्तुत किया। वह सन् १९८० में उत्तर प्रदेश के अपने गाँव के विद्यालय से बारहवीं कक्षा पास कर यहाँ आया था और दिल्ली विश्वविद्यालय में दैनिक मजदूरी पर नौकरी करने लगा था। उसने किसी कालेज में दाखिला नहीं लिया लेकिन स्वतंत्र छात्र के रूप में परीक्षा देकर बी.ए. और तत्पश्चात एम.ए. पास कर लिया। इसी बीच इसका विवाह हो गया और चार बच्चे भी हुए। जब उसने पी.एच.डी. में दाखिला के लिए आवेदन किया तब उसे दो वर्षों के लिए अवैतनिक अवकाश लेने की सलाह दी गई। किन्तु वह ऐसा कैसे कर पाता, क्योंकि उसे परिवार का भरण-पोषण भी करना था। विश्वविद्यालय ने उसे केवल रात की ड्यूटी देकर मदद की। उसे "अध्यात्म रामायण और आनन्द रामायण के तुलनात्मक अध्ययन" पर शोध प्रबन्ध तैयार करने में कितनी ही रातें जागनी पड़ीं। उसका कहना है कि रामायण की लगभग सौ व्याख्याएँ उपलब्ध हैं।

अब एक और थोड़ी अलग कहानी देखिये। सेन्ट्रल इटली की मारिया लूइजा पेत्रारोपा सितम्बर से प्रि-स्कूल अथवा नर्सरी से भी पूर्व कक्षा में पढ़ने जायेगी। जब वह १०५ वर्ष पूर्व पैदा हुई थी, तब प्रि-स्कूल जैसी कोई कक्षा नहीं होती थी। और वैसे भी वह जीवन भर किसी विद्यालय में पढ़ने नहीं गई।

कम से कम तनाव और बोझ

पीठ पर भारी बस्ते लेकर स्कूल जाते हुए छात्रों का नजारा भारत में आम तौर पर देखा जाता है। और यहाँ तक कि सिंगापुर में भी, जहाँ मेकैनिकल इंजिनियरिंग तथा बिजिनेस अध्ययन के विशेषज्ञ छः महीनों से स्कूली बस्तों के लोकप्रिय डिजाइनों की जाँच-पड़ताल कर रहे हैं और कम से कम तनाव और वजन वाले बस्तों का नया ढाँचा तैयार कर रहे हैं। बच्चों की ओर से पीठ एवं कंधों के गंभीर दर्द की अक्सर शिकायत आने पर यह अध्ययन किया जा रहा है।

जाँच-पड़ताल के दौरान विशेषज्ञों को यह पता चला कि बच्चे अपने बस्तों में पुस्तकों के अतिरिक्त पेंसिल बॉक्स, पानी की बोतलें और खिलौने भी रखते हैं, जिनसे बस्ते का वज़न बढ़ जाता है। विशेषज्ञों के दल ने अब बस्ते का ऐसा ढाँचा बनाया है जिसमें फोम से ढका हुआ गद्देदार साज़ है। उसमें दबाववाली कमानी भी है जो धक्का सहने का काम करती है। आशा करते हैं कि ऐसे बस्ते अगले सत्र से भारत में भी दिखाई देने लगेंगे।

बीड़ी पर प्रतिबंध

बीड़ी, जैसा कि तुम सब जानते होगे, सिगरेट के समान एक धूम्रपान है जो बड़े पैमाने पर भारत में, खास कर दक्षिण भारत में, बनायी जाती है । सस्ती होने के कारण मजदूरों में यह बहुत लोकप्रिय है और कम कड़वा पीनेवाले धूम्रपानी भी इसे पसन्द करते हैं । हाल से इसे निर्यात किया जाने लगा है और यह भारत के लिए विदेशी मुद्रा कमाने लगी है । निर्यातकों को पिछले दिनों बहुत घाटा सहना पड़ा क्योंकि अमरीका ने बीड़ी के आयात पर प्रतिबन्ध लगा दिया । अधिकारियों का कहना है कि इस धन्धे में बालश्रम लगा हुआ है । वास्तव में, अमरीकी सरकार ने यह दूरगामी निर्णय लिया है कि बालश्रम द्वारा उत्पादित कोई भी वस्तु वह आयात नहीं करेगी । यह बहुत दुख की बात है कि भारत में अब भी पटाखों, चूड़ियों और कालीनों के रोजगार में भारी मात्रा में बाल श्रम लगा हुआ है । उन्हें होटलों में भी प्लेट धोते हुए और बाजार में कुली का काम करते हुए देखा जा सकता है ।

चूहा (माऊस) दबाते ही पंचतंत्र देखिये !

पंचतंत्र में चूहों से भरी (माऊसी) कहानियाँ हैं । लेकिन शीर्षक का माऊस (चूहा) इंटरनेट से सम्बन्ध रखता है, जिसमें शीघ्र ही सम्पूर्ण पंचतंत्र और कथा सरितसागर की कहानियाँ उपलब्ध होंगी जिन्हें हर कम्प्यूटर इकाई पर माऊस दबाते ही देखा और पढ़ा जा सकता है। पूना विश्वविद्यालय का विज्ञान विभाग आवश्यक सौफ्टवेयर के साथ लगभग तैयार है, जिसमें अन्य कार्यक्रमों के साथ-साथ संस्कृत साहित्य की कहावतें तथा प्राचीन संस्कृत के मूल से उद्धृत सुभाषित - सूक्तियाँ भी सम्मिलित होंगी । 'संस्कृत इनफौरमेटिक्स' नाम की यह परियोजना कानपुर - आई.आई.टी., हैदराबाद तथा बंगलोर - सी. डैक के विशेषज्ञों के द्वारा तैयार की जा रही है ।

कहानी को सही अन्त दीजिए और पुरस्कार जीतिए

सर्जनात्मक प्रतिस्पर्द्धा

नीचे एक कहानी का आरम्भ दिया गया है । इसमें एक रोचक कथा के सभी उपादान मौजूद हैं । किन्तु यह 'सृजन' तुम्हारे हाथों में है ! तुम्हें सभी सम्भव कथाक्रमों की कल्पना करनी है और कहानी को अन्तिम रूप देना है । साथ ही एक आकर्षक शीर्षक भी । यह तुम्हें दो सौ से तीन सौ शब्दों के बीच करना है - न कम, न अधिक । सर्वोत्तम प्रविष्टि को आकर्षक पुरस्कार दिया जायेगा तथा इस पत्रिका में प्रकाशित भी किया जायेगा । यह प्रतिस्पर्द्धा हमारे बाल पाठकों के लिए है । अपना नाम, उम्र, कक्षा, विद्यालय का नाम तथा घर का पता (पिन कोड के साथ) लिखना न भूलना । यह सिद्ध कर दो कि तुम अपने से बड़ों की अपेक्षा कहीं अच्छा लिख सकते हो, इसलिए उनकी मदद न लो । कहानी इस प्रकार है :

एक गुरुकुल के कुछ छात्र विद्याध्ययन समाप्त कर अपने-अपने घर जाने की तैयारी कर रहे थे । विदा लेते समय छात्रों ने मुनि को साष्टांग प्रणाम कर उनका आशीर्वाद लिया । अन्त में गुरु का प्रिय शिष्य राजन आया । किन्तु, जबकि अन्य सभी छात्रों ने सम्मान के साथ अपना-अपना पाठ्यक्रम पूरा कर लिया था, राजन की योग्यता आशाजनक नहीं थी ।

''मुझे समझ में नहीं आता कि क्या कहूँ ।'' मुनि ने दुख के साथ कहा । ''कई क्षेत्रों में तुम दूसरों से बहुत ऊपर हो, किन्तु मुझे दुख है कि मैं तुम्हें पंडित न बना सका ।''

राजन अपनी त्रुटियों को अनुभव करता था । इसलिए उसने अपनी नज़र नीची कर ली । ''मुझे इसका संताप है गुरुदेव ! फिर भी आप के मार्ग-दर्शन के लिए मैं बहुत कृतज्ञ हूँ ।'' इतना कह कर वह मुनि का आशीर्वाद लेने के लिए उठा ।

''कोई बात नहीं वत्स!'' गुरु ने मुस्कुराते हुए कहा । ''मैं तुम्हें अनुसरण करने के लिए तीन स्वर्णिम नियम बताऊँगा । पहला, जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाये, कभी प्रयास न छोड़ो । दूसरा, अधिक से अधिक प्रश्न करो, सबके उत्तर मिलेंगे । तीसरा, यदि तुम किसी विचार को क्रियान्वित करने से पहले उस पर पुनर्विचार कर लो तो तुमसे कभी भूल नहीं होगी । यदि मेरी सलाह को याद रखोगे तो तुम जीवन की परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाओगे ।''

गुरु का यह परामर्श-कवच लेकर राजन अपने भाग्य की तलाश में निकल पड़ा ।
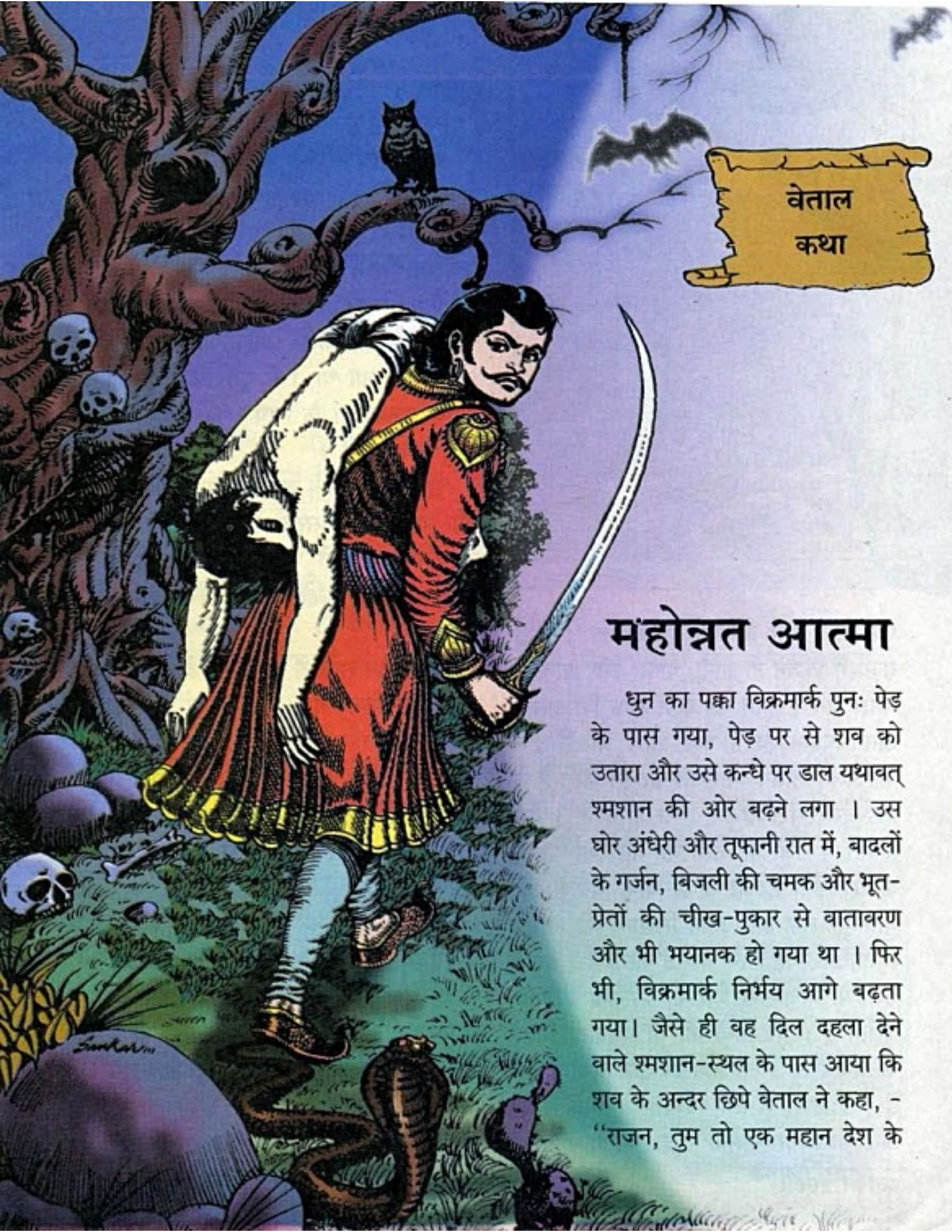
क्या उसे जीवन में सफलता मिली? यदि हाँ तो उसने तीन स्वर्णिम नियमों का उपयोग कैसे किया? कहानी का दूसरा भाग लिखते हुए इसे पूरा करो और एक यथोचित शीर्षक भी दो । अपनी प्रविष्टि के ऊपर ''सृजनात्मक प्रतिस्पर्द्धा'' लिख कर २५ अगस्त के पहले भेज दो ।

- सम्पादक

जुलाई 2000 की 'भारत की खोज' प्रश्नोत्तरी के उत्तर

१. अ. महावीर जिन तथा गौतम बुद्ध

ब. पाली

स. त्रिपिटक

द. अर्ध मगधी

इ. पूर्व, अंग, मूलसूत्र

२. उज्जैन के राजा भर्तृहरि और रानी पिंगला

महोन्नत आत्मा

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास गया, पेड़ पर से शव को उतारा और उसे कन्धे पर डाल यथावत् श्मशान की ओर बढ़ने लगा । उस घोर अंधेरी और तूफानी रात में, बादलों के गर्जन, बिजली की चमक और भूत-प्रेतों की चीख-पुकार से वातावरण और भी भयानक हो गया था । फिर भी, विक्रमार्क निर्भय आगे बढ़ता गया। जैसे ही वह दिल दहला देने वाले श्मशान-स्थल के पास आया कि शव के अन्दर छिपे वेताल ने कहा, - "राजन, तुम तो एक महान देश के

एक योग्य और ज्ञानवान शासक हो । तुम्हारे राज्य में कितने ही ज्ञानी, पंडित और शास्त्रों के मर्मज्ञ होंगे । तुमने यह देखा होगा कि अलग-अलग विद्वान एक ही धर्म, शास्त्र और सिद्धान्त की अलग-अलग व्याख्याएं प्रस्तुत करते हैं जो एक-दूसरे से बिलकुल भिन्न होती हैं । वैसी स्थिति में राजा को उसी की बात का समर्थन करना पड़ता है जो अपने वाक् चातुर्य और युक्तियुक्त तर्क द्वारा अपने सिद्धान्त को अधिक से अधिक स्पष्ट करके प्रस्तुत करता है । अथवा राजा के विचार से जिसकी व्याख्या मिलती-जुलती है । ऐसे लोगों को भी प्रमुखता मिलने का भय रहता है जो ज्ञानहीन और अयोग्य होते हैं । उदाहरण के लिए विश्वनाथ नामक पंडित और नयसागर नामक राजा की कथा तुम्हें सुनाता हूँ ।''

वेताल ने कहानी इस प्रकार सुनाई :

बहुत प्राचीन काल की बात है । भुवनगिरि राज्य में पंडित विश्वनाथ एक गुरुकुल के कुलाचार्य थे । वे न्यायशास्त्र और व्याकरण के प्रकाण्ड विद्वान थे ।

एक दिन उन्हें सन्देशवाहक द्वारा राजा का एक पत्र मिला, जिसमें उन्हें राजा से मिलने के लिए कहा गया था । वे दूसरे दिन ही अपने शिष्य कनकशर्मा के साथ राजा से मिलने के लिए निकल पड़े ।

सायंकाल तक वे काशीपुर नामक गाँव पहुँचे और वहाँ की एक सराय में रात बितायी । रात में कनकशर्मा को एक आश्चर्यजनक बात मालूम हुई जिसे उन्होंने अपने आचार्य को बता दी ।

दूसरे दिन सवेरे वे दोनों गाँव के बाहर एक तालाब के निकट गये । वहाँ बहुत भीड़ थी । सबकी दृष्टि तालाब के मध्य-स्थित रेत के टीले पर टिकी थी । पूछने पर पता चला कि प्रति वर्ष श्रावण पूर्णिमा के दिन स्वामी विमलानन्द तालाब के जल से प्रकट होकर भक्तों के दर्शन देते हैं ।

तभी अचानक भक्तों में कोलाहल मच गया । स्वामी की जयजयकार से वातावरण गूंज उठा । पंडित विश्वनाथ और कनकशर्मा की दृष्टि पानी से प्रकट होते हुए एक दिव्य पुरुष पर पड़ी । वे जल पर चलते हुए किनारे की ओर जा रहे थे । कनक शर्मा उनके दर्शन कर अपने को धन्य मानने लगा ।

इस दृश्य को देखने के बाद पं. विश्वनाथ और कनकशर्मा राजधानी की ओर चल पड़े । मार्ग में वे एक अरण्य स्थित एक आश्रम में रुके । वह एक महान तपस्वी शरभ मुनि का आश्रम था । आश्रम के प्रांगण में एक विशाल हवनकुण्ड प्रज्वलित हो रहा था । आश्रम वासियों से पता चला कि कल प्रातःकाल शरभ मुनि इस कुण्ड में प्रवेश करेंगे, इसलिए यह हवनकुण्ड रात भर प्रज्वलित रहेगा ।

दूसरे दिन प्रातः तपस्वी ने सचमुच उस अग्निकुण्ड में प्रवेश किया और एक घंटे की समाधि के बाद उससे बाहर निकले । दर्शक चकित, स्तंभित और भयातुर थे । हवनकुण्ड से बाहर निकलने के बाद तपस्वी का शरीर देवपुरुष के समान स्वर्ण-कांति से चमक रहा था । कनक शर्मा इस दृश्य को देख कर हर्ष विभोर हो गया और इनके दर्शन से अपने जीवन को धन्य मानने लगा ।

इस दृश्य को देखने के बाद वे दोनों पुनः राजधानी की ओर चल पड़े और पहाड़ी पगडंडियों से होते हुए दोपहर तक राजदुर्ग गाँव में पहुँचे । वहाँ की भूमि बंजर थी । उस वर्ष वहाँ वर्षा भी नहीं हुई । इसलिए वहाँ अकाल की स्थिति उत्पन्न हो गई थी । लोग भूख और प्यास से मर रहे थे ।

तभी उसी गाँव का एक युवा किसान रमेश उनकी रक्षा के लिए मसीहा बन कर खड़ा हो गया । उसने अकाल ग्रस्त क्षेत्रों के उत्साही युवकों को प्रेरित कर अनाज-वितरण केन्द्रों की स्थापना की, जिसके लिए समृद्ध ग्रामों से पर्याप्त

मात्रा में अन्न एकत्र किया । इन केन्द्रों से वह भूखे लोगों को अन्न देकर उन्हें मौत से बचाता रहा ।

फिर भी, पं. विश्वनाथ और कनकशर्मा के सामने ही भूख से तड़प कर एक वृद्धा स्त्री की मृत्यु हो गई । रमेश ने उसे बचाने की पूरी कोशिश की, परन्तु वह बच न सकी । इस दृश्य को देख कर रमेश की आँखों में आँसू आ गये ।

पं. विश्वनाथ ने न केवल रमेश के पुरुषार्थ बल्कि उसके कोमल हृदय की भी मन ही मन प्रशंसा की । उन्होंने कहा, "रमेश, तुम जिस प्रकार निस्वार्थ भाव से रात दिन कष्ट झेल कर, अपनी चिंता छोड़ कर ग्रामवासियों की सेवा में जुटे हो, यह देश की युवकों के लिए बहुत बड़ी

मिसाल है । यह बड़ी-बड़ी तपस्याओं से भी अधिक कठिन कर्म योग है । मानव सेवा ही प्रभु की सेवा है ।''

''लेकिन तुमने महाराज को सूचना देकर समय पर राजकीय सहायता लेने का यत्न क्यों नहीं किया?'' पं. विश्वनाथ ने रमेश से पूछा ।

रमेश ने विनयपूर्वक बताया, - ''हमने अकाल की संभावना देख कर पहले ही महाराज को सूचित किया और सहायता की माँग की । लेकिन महाराज ने इस ओर शायद इसलिए ध्यान नहीं दिया कि इतने बड़े राज्य में ऐसी स्थिति तो कहीं न कहीं होती ही रहती है । कहाँ - कहाँ राजकीय सहायता दी जाये ।

पं. विश्वनाथ को लगा कि रमेश के हृदय की पीड़ा उसके कथन में व्यंग्योक्ति बन गई है । फिर भी उसने उससे कुछ नहीं कहा और गुरु-शिष्य दोनों पुनः राजधानी की ओर चल पड़े ।

राजधानी में पं. विश्वनाथ का भव्य स्वागत किया गया । उन्होंने राजा से मार्ग के सभी अनुभवों की चर्चा करते हुए युवा समाज सेवक किसान रमेश की प्रशंसा की और उसके अकालग्रस्त गाँव में तत्काल राजकीय सहायता पहुँचाने की अनुशंसा की ।

राजा ने पं. विश्वनाथ की बातें ध्यानपूर्वक सुनने के बाद कहा, - ''हमारे देश में कितने ही महोन्नत आत्माएँ हैं । उनमें कौन सबसे बड़ा महोन्नत है, यह निर्णय करना बहुत कठिन है । राज कर्मचारियों द्वारा प्राप्त राज्य की महोन्नत आत्माओं की सूची मैं तुम्हें दे रहा हूँ । तुम युक्तियुक्त तर्क से यह निश्चित करो कि कौन वास्तविक महोन्नत आत्मा है ।'' यह कह कर राजा ने पं. विश्वनाथ को कुछ कागज-पत्र दिये ।

पं. विश्वनाथ ने उन प्रपत्रों को पढ़ने के बाद राजा से कहा, - ''महाराज ! अकाल पीड़ित रमेश के गाँव में आप शीघ्र ही राजकीय सहायता भेजने का प्रबंध करें । वह अकेला ही आप की भूख-पीड़ित प्रजा की रक्षा के यज्ञ में अपने प्राणों की आहुति दे रहा है । वह राज्य का दुर्लभ और कर्मठ कर्म योगी है । मेरी दृष्टि में आप के राज्य भर में वही सच्चा महोन्नत आत्मा है ।''

वेताल ने कहानी यहीं समाप्त करके राजा विक्रमार्क से पूछा, - ''राजन! लोकमत और राजा नयसागर की बुद्धि के अनुसार पं. विश्वनाथ

महान पंडित और न्यायशास्त्री होंगे, किन्तु मेरी दृष्टि में तो वह अज्ञानी और वितंडावादी है । उसने स्वयं दो तपस्वियों को, दो महिमावान महापुरुषों को देखा जिनके पास दिव्य शक्तियाँ थीं और जो अपनी तपस्या के बल पर जल और अग्निकुण्ड में समाधि लगा सकते थे । उनको महोन्नत न समझ कर एक सामान्य किसान को महोन्नत आत्मा निश्चित करना क्या उसका अज्ञान नहीं है? उसके न्यायशास्त्र का वितंडावाद नहीं है? यदि मेरे प्रश्न का उत्तर जानते हुए भी मौन रहोगे तो तुम्हारे सिर के अनेक टुकड़े हो जायेंगे ।''

राजा विक्रमार्क ने अपना मौन भंग करके वेताल से कहा, - ''वेताल, तुम्हारा सोचने का ढंग पल्लवग्राही है, सतही है, स्थूल है । तुम हठयोगी विमलानन्द स्वामी और शरभ मुनि के चमत्कारों से प्रभावित हो । लेकिन क्या तुमने गहराई से, गंभीरतापूर्वक सोचा है कि अपने स्वार्थ और अहम को पुष्ट करने वाले हठयोगियों से समाज का क्या उपकार होता है । वे ऐसे चमत्कारों से भोली भाली जनता को चमत्कृत कर अपना ही स्वार्थ साधते हैं । इन चमत्कारों से वे एक भूखे का भी प्राण नहीं बचा सकते, जब कि रमेश ने निस्वार्थ भाव से दिन-रात परिश्रम कर अपने गाँव को मौत के मुँह में जाने से बचाया है । हठयोगियों की सिद्धियाँ व्यष्टि परक हैं, जब कि रमेश का पुरुषार्थ समष्टिपरक । वे तपस्वी अपने चमत्कार का प्रदर्शन कर प्रजा में यश और नाम कमाना चाहते हैं, जब कि प्रजा का अपना उससे कोई हित नहीं होता । इससे मानवता को कोई लाभ नहीं मिलता । मानव-सेवा ही सच्चे अर्थ में भगवान की सेवा है । इस कसौटी पर रमेश ही महोन्नत आत्मा है । इसलिए मेरी दृष्टि में पं. विश्वनाथ का निर्णय न्याय शास्त्र के सर्वथा अनुकूल है और तुम्हारा सन्देह निर्मूल है ।''

राजा का मौन भंग करने में सफल वेताल शवसहित पुनः अदृश्य हो गया और उसी वृक्ष पर जा बैठा ।

आधार : वल्लभ की रचना

समस्या एक रुपये की

निरंजनवर गाँव में सप्ताह में एक दिन हाट लगती थी । आस-पास के गाँवों में रहनेवाले यहीं से हफ्ते भर के लिए अपनी जरूरत की चीजें खरीद कर ले जाते ।

उसी गाँव में अवतार की एक पँसरहट्टी थी जिसमें अनाज, नमक, तेल से लेकर खाने-पीने की हर चीज़ बिकती थी । वीरभद्र, जो गाँव का एक धनी व्यक्ति था, अपना सारा सामान उसी की दुकान से खरीदता था । उसे अवतार की ईमानदारी पर पूरा भरोसा था । इसलिए वह जितने रुपये माँगता, वीरभद्र बिना कुछ पूछताछ किये चुपचाप दे देता ।

एक दिन सामान के बदले पैसे देते समय उसके पास एक रुपया कम पड़ गया । उसने अवतार से कहा, - "एक रुपया अगली बार ले लेना । मैं जरा भुलक्कड़ हूँ, इसलिए तुम्हीं याद रखना ।

अवतार एक चुस्त व्यापारी था और लेन-देन में संकोच नहीं करता था । इसीलिए जब अगली बार वीरभद्र सामान लेने आया तो उसने याद दिला कर उससे पिछला बकाया एक रुपया वसूल कर लिया ।

कुछ दिनों के बाद वीरभद्र जब पुनः सामान लेने आया और पैसे चुका कर जाने लगा तब अवतार ने विनयपूर्वक कहा, - "वीरभद्र जी, आप से मुझे एक रुपया और लेना है ।"

वीरभद्र पहले तो चौंका । परन्तु फिर कुछ सोच कर उसने जेब से एक रुपया निकाल कर दे दिया । कुछ हफ्तों के बाद अवतार ने फिर एक रुपया मांगा । वीरभद्र को यद्यपि अच्छी तरह याद था कि उसने उसका उधार दो बार दे दिया है, फिर भी उसने चुपचाप उसे एक रुपया दे दिया । यह सिलसिला चलता रहा । अवतार हर बार सामान के बदले पैसों के

जानकी अग्रवाल

अतिरिक्त एक रुपया और मांगता और बीरभद्र चुपचाप बिना कुछ पूछताछ किये देकर चला जाता ।

अवतार की यह आदत उसे अच्छी नहीं लगी । सोचने लगा, ''अवतार लालची हो गया है । ऐसा तो हो नहीं सकता कि वह हर बार भूल जाता हो । हो न हो, वह जान-बूझ कर बेइमानी कर रहा है और मेरी भलमनसाहत का लाभ उठा रहा है । अब मैं उसकी बेइमानी नहीं चलने दूँगा ।'' इसलिए दूसरी बार जब अवतार ने पिछला बकाया के नाम पर उससे एक रुपया फिर मांगा तब बीरभद्र क्रोधित हो उठा और बोला, - ''मैंने कितनी बार तो तुम्हारा एक रुपया चुका दिया है ! और कब तक देता रहूँ?

''लेकिन जब तुम्हें याद था कि तुमने मेरा एक रुपया पहले ही चुका दिया है, तो बार - बार मेरे माँगने पर तुम क्यों देते रहे ।'' अवतार ने शांति से मुस्कुराते हुए कहा ।

बीरभद्र ने ध्यान से अवतार के चेहरे को देखा । फिर वह भी मुस्कुराता हुआ बोला, - ''पहली बार में पैसा चुका देने के बाद जब तुमने दूसरी बार माँगा तब मैंने सोचा कि शायद मैं ही देना भूल गया था । भुलक्कड़ जो ठहरा । इसीलिए मैंने दुबारा एक रुपया दे दिया । तीसरी बार माँगने पर मैंने सोचा कि व्यापार के काम में व्यस्त रहने के कारण तुम भूल गये होगे कि मैंने तुम्हें एक रुपया दे दिया है । इसलिए चुपचाप फिर दे दिया । चौथी बार मांगने पर तुम्हारे भुलक्कड़पन पर तरस खाकर एक रुपया दे दिया । पाँचवी बार कुतूहलवश जानने के लिए दे दिया कि देखें तुम कब तक मुझसे पिछला बकाया एक रुपया मांगते रहोगे । लेकिन

आज धैर्य टूट गया और कह बैठा कि आखिर एक रुपया कब तक देता रहूँ ।''

अवतार ने हँसते हुए कहा, - ''पहली बार जब तुमने एक रुपया दे दिया, वह मैं भूल गया था । इसीलिए दूसरी बार मांग बैठा । लेकिन रुपया देते समय तुम्हारे चेहरे के भाव को देख कर मैं समझ गया कि मैंने गलती से दुबारा मांग लिया । अगले हफ्ते जब तुम आये तब तुम्हारी प्रतिक्रिया जानने के लिए मैंने जान बूझ कर पुनः गंभीरतापूर्वक एक रुपया मांग लिया । लेकिन मुझे यह देख कर आश्चर्य हुआ कि तुमने बिना कुछ कहे फिर एक रुपया दे दिया । मैं समझ गया कि तुम संकोचवश कुछ नहीं कह रहे हो और हर बार एक रुपया दिये जा रहे हो । मैं चाहता था कि मेरे बार-बार अनुचित रूप से एक रुपया मांगने की तुम पर कोई प्रतिक्रिया हो । बस, तुम्हारी प्रतिक्रिया देखने के लिए ही उसके बाद हर बार एक रुपया मांगता रहा । मैं यह देखना चाहता था कि तुम कब तक बिना किसी प्रतिक्रिया के यों चुपचाप देते रहोगे । तुम्हें कष्ट पहुँचाने के लिए क्षमा चाहता हूँ । तुम्हारे पैसे मेरे पास सुरक्षित हैं ।''

यह कह कर अवतार घर के अन्दर गया और वीरभद्र को एक थैली देते हुए उसने फिर कहा, - ''लेन-देन में दोस्त हो या रिश्तेदार, किसी के साथ संकोच कभी नहीं करना चाहिये । तभी पारस्परिक सम्बन्ध बने रहते हैं । संकोचवश व्यक्ति से कुछ कहने में नहीं बनता, किन्तु मन ही मन वह दूसरे के लिए क्या-क्या बुरे विचार सोचने लगता है । मैंने तुम्हारा संकोच तोड़ने के लिए ही तुमसे बार-बार जान-बूझ कर रुपया माँगा । कष्ट के लिए पुनः क्षमा चाहता हूँ ।''

वीरभद्र ने अवतार की व्यावहारिक बुद्धि की प्रशंसा करते हुए कहा, - ''तुम्हारे जैसे व्यावहारिक बुद्धि के मित्र पर मुझे गर्व है ।''
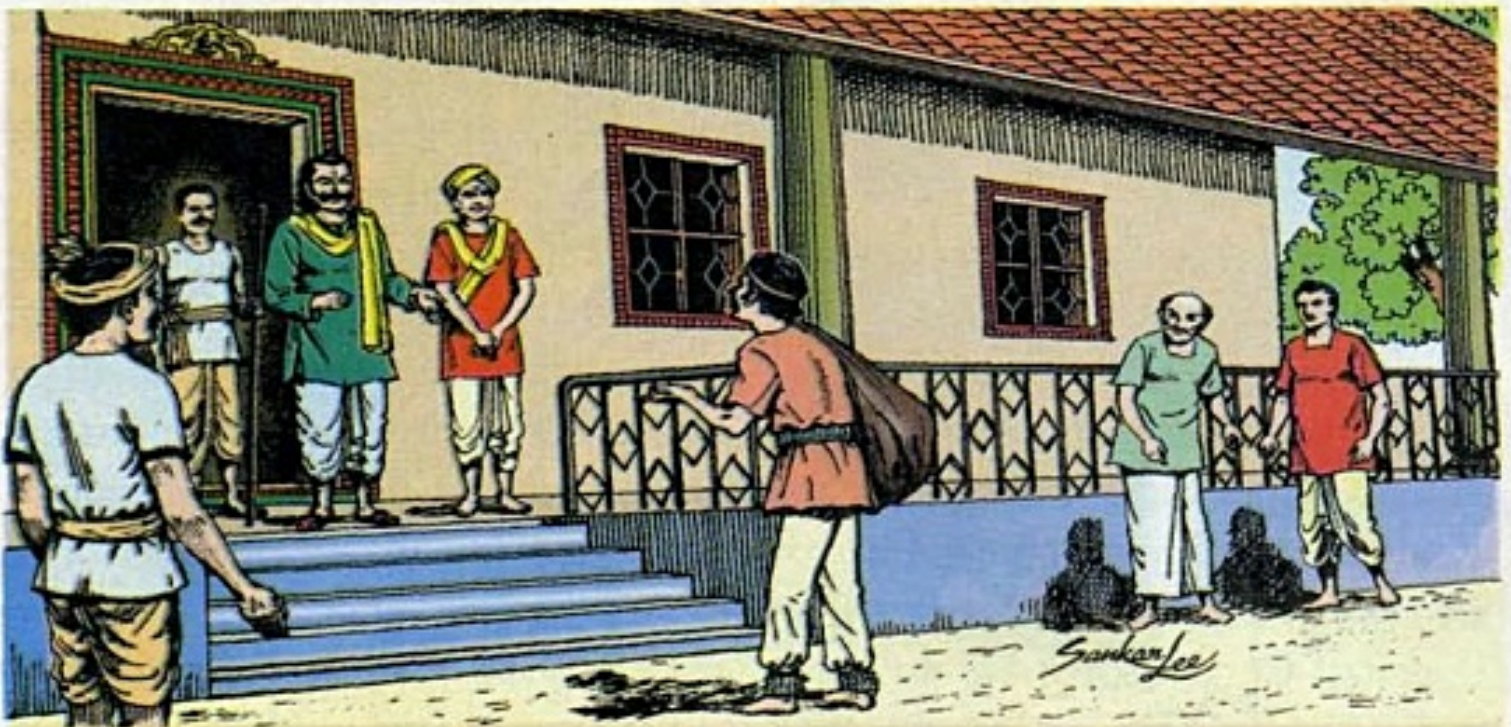
जादूगर की चाह

हेलापुरीका जमींदार विनयशील बहुत उदार और दयालु स्वभाव का था । अपनी जमींदारी के ग्रामीणों की हर तरह से सहायता करने के लिए वह हमेशा तत्पर रहता था । उनके दुख को वह अपना दुख समझता था । इसलिए उसकी जनता सच्चे हृदय से उसका सम्मान करती थी ।

लेकिन आस-पास के गाँवों में कुछ ऐसे लोग भी थे जो उससे ईर्ष्या करते थे और उसे अपमानित करने की ताक में रहते थे ।

एक दिन विनयशील अपनी जमींदारी के अधीनस्थ सुगन्ध पुरी गाँव के कुछ प्रमुख व्यक्तियों से वहाँ की जनता के हित एवं उनकी समस्या-सम्बन्धी बातें कर रहा था । तभी वहाँ जादू का तमाशा करनेवाला एक जादूगर आ पहुँचा ।

उसने अपना परिचय देते हुए जमींदार विनयशील से उसके सामने अपना जादू दिखाने की स्वीकृति माँगी । विनयशील ने स्वीकृति देते हुए कहा, - "अवश्य दिखाओ । इससे गाँव की समस्याओं में उलझे मन का मनोरंजन भी हो जायेगा ।"

जादूगर ने कृतज्ञता प्रकट करते हुए जादू का तमाशा दिखाना शुरू किया । उसने तरह-तरह के उपकरणों की सहायता से जादू के चमत्कारपूर्ण खेल दिखाये ।

जादू के प्रदर्शन के बाद जमींदार ने जादूगर से कहा, - "खेल के इनाम में जो चाहिये माँग लो ।"

"बचन देकर पीछे तो नहीं हट जायेंगे । क्या मेरी इच्छा के अनुसार, जो भी माँगू, आप सचमुच दे सकेंगे ?" जादूगर ने संदेह प्रकट किया ।

"माँग कर के तो देखो । मैं बचन देकर पीछे हटनेवाला नहीं हूँ । जमींदार ने कहा ।

"सरकार, मैं आप को, बाल के बिना सिर और मूँछ के बिना मुँह के साथ देखना चाहता हूँ । मेरी

बजरंग

यही इच्छा है । मेरे खेल के इनाम में मेरी यह इच्छा पूरी कर दीजिये । यही मेरी प्रार्थना है ।'' जादूगर ने मुस्कुराते हुए कहा ।

उसकी इस विचित्र माँग को सुनकर सभी स्तंभित रह गये । जमींदार स्वयं इसे सुन कर चकित था। फिर गंभीर होकर सोचने लगा - ''यह निस्सन्देह मेरे विरोधियों की चाल है ।''

लेकिन वह वचनबद्ध था । यदि जादूगर की इच्छा के अनुसार अपने सिर के बाल और मूँछें कटवाता तो अपमानित हो जाता । वैसे भी, उसे अपने लम्बे बाल और घनी मूँछें बहुत प्रिय थीं ।

जमींदार को असमंजस में देख कर जादूगर बोला, - ''सरकार, अपने वचन का शीघ्र पालन कीजिये । आपने कहा है कि वचन देकर पीछे हटनेवालों में से आप नहीं हैं ।''

कोई और उपाय न देख कर जमींदार ने कहा, - ''तुम्हें एक मौका और दे रहा हूँ । कुछ और माँग लो । हज़ार अशर्फियाँ तक इनाम दे सकता हूँ ।''

''नहीं सरकार, मेरी और कोई इच्छा नहीं है । आप मेरी इच्छा पूरी न कर सकें कोई बात नहीं । लेकिन आप का अपने ही हाथों अपमान हो जायेगा । लोग यही कहेंगे कि जमींदार वचन देकर मुकर गया । जैसी आप की इच्छा ।'' जादूगर की बात में चालाकी स्पष्ट झलक रही थी ।

जमीन्दार का प्रधान सलाहकार विष्णु शर्मा यह सब दूर से देख-सुन रहा था । स्थिति बिगड़ते देख वह अचानक अपनी जगह से उठा और जादूगर को अपने साथ आने का संकेत किया । जादूगर चुपचाप उसके पीछे-पीछे गया । विष्णु शर्मा उसे ड्योढ़ी तक ले गया और वहीं वापस ले आया ।

अब जादूगर के सिर पर न बाल थे, न मुँह पर मूँछें । विष्णु शर्मा ने सबके सामने जादूगर से कहा, - ''अब बाल के बिना अपने सिर और मूँछ के बिना अपने मुँह के साथ जमींदार को देखो, जब तक चाहो । यही तुम्हारी इच्छा थी न?

परिस्थिति उलट जाने से उपस्थित लोगों के चेहरे पर हँसी के साथ हैरानी भी थी । जमींदार ने राहत की साँस ली । उसने इस अपमानजनक स्थिति से बचाने के लिए विष्णु शर्मा की बुद्धिमानी की भरपूर प्रशंसा की ।
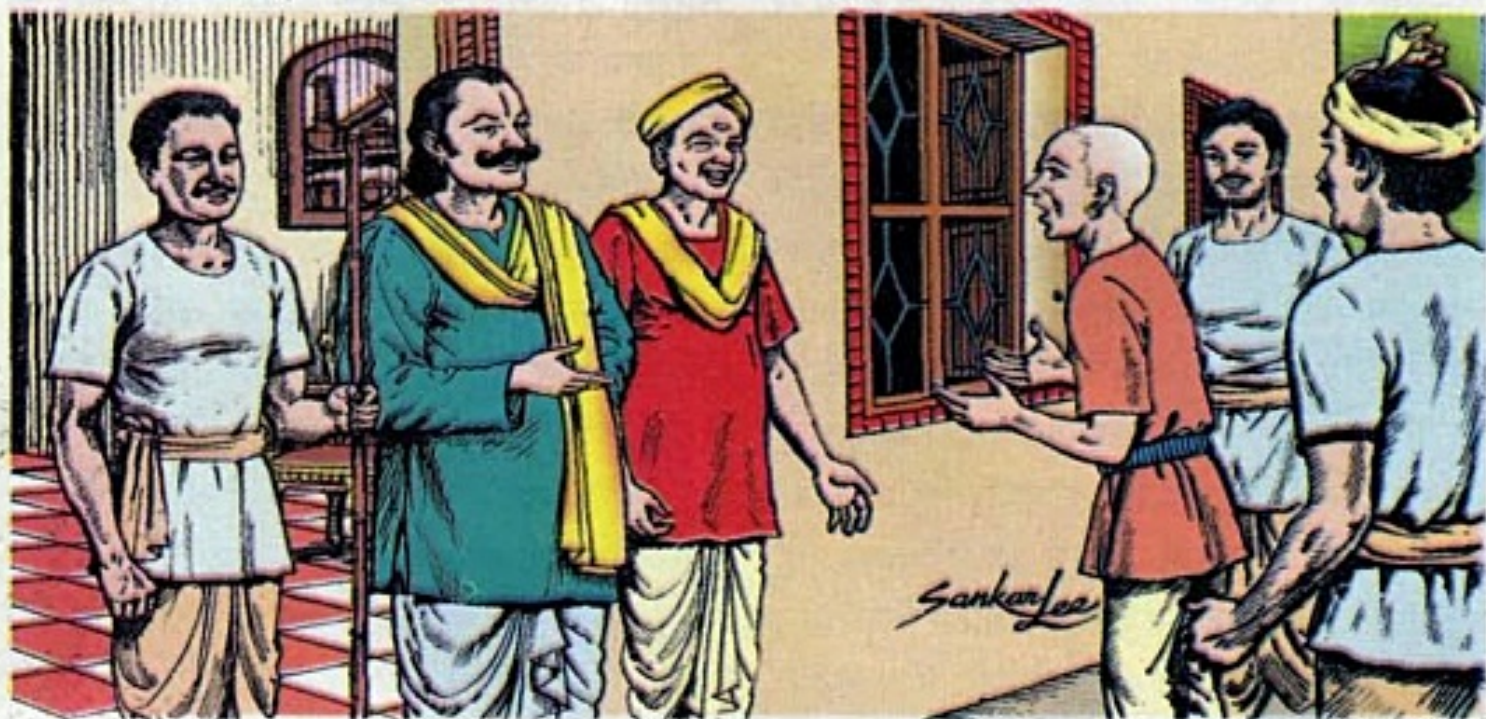
स्वर्ण-सिंहासन

9

(अब तक : मलय ध्वज की कहानी समाप्त कर दूसरी साल भंजिका ने भी विजयदत्त से प्रश्न किये जिनका सही उत्तर दे देने के बाद वह स्वर्ण सिंहासन की दूसरी सीढ़ी पर आरोहण करने का अधिकारी हो गया । तब न्याय की देवी तीसरी सालभंजिका ने विजयदत्त को एक कहानी सुनाई । इस कहानी में सुभद्रा देश का राजा न्यायवर्धन आदर्श न्याय के लिए प्रसिद्ध था । उसके दरबार में न्याय के लिए दो मित्र आये और दोनों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से बयान दिये । वीर नाम के व्यक्ति ने अपने मित्र चन्द्र पर आरोप लगाते हुए कहा कि उसने बचपन में ही वचन दिया था कि वह अपनी बेटी की शादी मेरे बेटे से करेगा । लेकिन अब वह धनी हो गया है, इसलिए मेरी गरीबी के कारण मेरे बेटे से विवाह नहीं करना चाहता । राजा ने इसके बाद उसके मित्र चन्द्र से बयान देने को कहा । - तदोपरान्त)

चन्द्र ने विनय पूर्वक महाराज को प्रणाम करते हुए कहा, - ''वीर ने मेरे बारे में जो कुछ कहा, मूलतः सच है । किन्तु अपने प्रयोजन को सिद्ध करने के लिए उसने झूठ का इतना मुलम्मा चढ़ा दिया है कि सच ढक गया है । उसकी बात सुनकर हरेक को यही लगेगा कि उसके साथ बहुत अन्याय किया जा रहा है और इसके लिए पूरी तरह से मैं दोषी हूँ ।

''यह सच है महाराज, कि मैं और वीर बचपन से दोस्त हैं और उसने यह भी सच कहा है कि दोस्ती को स्थायी बनाने के लिए हम दोनों सम्बन्धी बन जाना चाहते हैं । लेकिन बात से मुकर जाने का कारण यह नहीं है कि वह गरीब है और मेरी आर्थिक स्थिति सुधर गई है । बल्कि उसका कारण है - हम दोनों की पत्नियों के कारण दोनों की जीवन-शैलियों में आसमान - जमीन का अन्तर होना।

''मेरी पत्नी जानकी परिश्रमी है, चतुर तथा

लक्ष्मी गायत्री

मितव्ययी है और बराबर परिवार के अच्छे भविष्य के बारे में सोचती है । मैं जितना कमा कर लाता, उसके आधे से घर का खर्च चला लेती और आधा बचा लेती । समय बचा कर बेचने के लिए पापड़ बनाती और सम्पन्न लोगों के घरों में कामकाज कर कुछ और धन कमाने की कोशिश करती । जो कुछ इस तरह वह बचाती उसे कम ब्याज पर उधार लगा कर कुछ और आय बढ़ाने का प्रयास करती । उसी की बुद्धि, चतुराई और परिश्रम के कारण आज हम सुखी-सम्पन्न हैं । मैंने भी परिश्रम करना अपनी पत्नी से ही सीखा । हम दोनों से प्रेरणा लेकर मेरी बेटी भी बहुत परिश्रमी हो गई है । हम तीनों मेहनत करके जीवन को और अधिक सुखद और जीने योग्य बनाना चाहते हैं ।

''वीर की पत्नी कनका का स्वाभव मेरी पत्नी से बिलकुल उल्टा है । वह सुस्त और लापरवाह स्त्री है । उसे अपने पति और बेटे के लिए भी खाना बनाना मुश्किल लगता है । जहाँ आधा सेर चावल बनाने की जरूरत होती है, वहाँ वह सेर भर बना देती है । घर का खर्च बुद्धिमानी से नहीं चलाती । जो कुछ पति कमा कर लाता है, वह लापरवाही से खर्च कर उसे और कमाने के लिए कोसती रहती है । स्वयं मेहनत कर घर की आमदनी बढ़ाने में हाथ बँटाना तो दूर की बात है । उनके बच्चे भी घर के काम-काज में हाथ नहीं बँटाते । मैले-कुचैले कपड़े पहने गलियों में भटकते रहते हैं । इस ओर उसकी पत्नी का ध्यान ही नहीं जाता ।

''पहले तो हमने उनकी स्थिति पर ध्यान नहीं दिया । लेकिन हम अपने कुल के वयोवृद्ध जनों के सामने वचनबद्ध थे । इसलिए हमने अपने होनेवाले दामाद सारंग को सुधारने और उसे मेहनती बनाने का निश्चय किया । मेरी पत्नी ने इस दिशा में अनेक प्रयत्न किये । लेकिन उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा । वह काम से दूर भागता था । यदि काम के लिए उस पर दबाव डालती तो सारंग की माँ नाराज हो जाती और उल्टा मेरी पत्नी पर दोष मढ़ती कि वह धन के घमंड में उसके बेटे को सता रही है और अपमानित कर रही है । यहाँ तक कि वीर की पत्नी यह समझने लगी कि हम लोग उसके बेटे को माँ-बाप से अलग कर रहे हैं । हम लोगों को अब भी आशा थी कि उनके विचार बदल जायेंगे और हमारा अभिप्राय समझ कर अपनी गलती पर पछतायेंगे ।

लेकिन हमें अन्त में निराश होना पड़ा ।

अब सारंग सतरह साल का युवा हो गया है । फिर भी जिन्दगी के प्रति लापरवाह बना हुआ है । वह गाँव के बिगड़े हुए युवकों के साथ बैठ कर दिन भर ताड़ी पीता रहता है और जुआ खेलता रहता है । फिर भी उसके माता-पिता उसे कुछ नहीं कहते? भला ऐसे आलसी, गैर जिम्मेदार, बुरी आदतों के शिकार व्यक्ति से अपनी सुशील और मेहनती लड़की का विवाह कर उसका गला अपने हाथों से कैसे घोंट दूँ? अपनी आँखों के सामने उसकी जिन्दगी कैसे बर्बाद होने दूँ । परिस्थिति को देखते हुए गाँव और समाज के बड़े-बूढ़ों ने भी मेरे पक्ष का समर्थन किया, क्योंकि उन्हें मेरा निर्णय ही उचित लगा । लेकिन वीर मेरे धन के लालच के कारण इस तथ्य को तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत कर रहा है और यह बताता है कि मेरे धन के प्रभाव के कारण ही गाँव वाले मेरा समर्थन कर रहे हैं । जब कि सचाई यह है कि मेरे धन और मेरे निर्णय के बीच कोई सम्बन्ध नहीं है । हमें वीर और सारंग की गरीबी से घृणा नहीं है । घृणा है उसके आलसीपन, गैर जिम्मेदारी और बुरी आदतों से ।'' इतना कह कर चन्द्र चुप हो गया ।

महाराज ने चन्द्र की बातें ध्यान से सुनीं । उन्होंने पल भर के लिए दोनों पर एक पैनी नज़र डाली । चन्द्र ने यद्यपि साधारण वस्त्र पहन रखे थे, पर स्वच्छ और शालीन थे । मुखमंडल शान्त था । वीर के वस्त्र गन्दे और बाल विखरे थे । आँखों में भय और घबराहट थी ।

वीर आवेश में कुछ कहना ही चाहता था कि

महाराज ने उसे शांत रहने का संकेत किया और चन्द्र से पूछा, - ''अब बेटी का विवाह किससे करने का इरादा है?''

''महाराज ! अब तक मैंने यह बात गुप्त रखी थी । लेकिन आपने जब यह प्रश्न पूछा है तब आप को यह बता देना मेरा धर्म है । मेरे साले का बेटा भी सारंग की ही उम्र का है । वह सब तरह से मेरी बेटी के योग्य है । वह सुशील स्वभाव का है । उसमें कोई बुरी आदत नहीं है । वह परिश्रमी है और खेती - बाड़ी का सारा काम जानता है । वह पढ़ने-लिखने में भी होशियार है । उसके माता-पिता इस सम्बन्ध के लिए सहमत हो गये हैं । लड़का-लड़की दोनों राजी हैं ।'' चन्द्र ने विस्तार से सब कुछ स्पष्ट बता दिया ।

चन्द्र की बात सुन कर वीर ने फिर आवेश

में कुछ कहना चाहा । किन्तु महाराज ने उसे रोकते हुए कहा, - "यहाँ आवेश और क्रोध के लिए कोई स्थान नहीं है । आप दोनों की बातें मैंने सुन ली हैं । अब दोनों शान्ति से बैठ जाइये ।"

इसके बाद महाराज का आदेश पाकर एक विदेशी व्यापारी मणिकर्ण ने अपनी शिकायत यों सुनाई : "महाराज ! यहाँ से थोड़ी दूर पर स्थित सिंहद्वीप का मैं नागरिक हूँ । मेरे पिता एक बड़े व्यापारी थे । पिता जी की इच्छा के अनुसार मैं भी बचपन से ही व्यापार के काम में हाथ बँटाने लगा । लेकिन उनके व्यापार में मेरी रुचि अधिक नहीं थी । इसलिए प्राय: दोस्तों के साथ घूमने निकल जाया करता था । लेकिन अचानक पिता के दिवंगत हो जाने के बाद पिता जी का व्यापार संभालना पड़ा । पिता जी के मित्रों ने समय-समय पर मार्गदर्शन भी किया । मैंने बहुत प्रयास किया कि उनके व्यापार को ठीक से करूँ तथा और आगे बढ़ाऊँ । परन्तु मेरी महत्वाकांक्षा समुद्री व्यापार करने की थी । मेरे पिता के शुभ चिंतकों ने तथा मेरी माँ ने भी समुद्री व्यापार करने से मना किया । किन्तु मेरा अटल विश्वास था कि समुद्री व्यापार से न केवल सौ गुना अधिक धन कमाया जा सकता है, बल्कि वह अधिक रोमांचक भी है । लेकिन अब अनुभव कर रहा हूँ कि वह मेरी बहुत बड़ी भूल थी ।

"मैंने मार्बी द्वीप में सस्ते मूल्य पर सुगन्धित द्रव्य, नारियल, नारियल के रेशे तथा हाथी दाँत की बनी अनेक वस्तुएँ खरीदीं और व्यापारियों के जहाज में लाद कर बाहर निकल पड़ा । मार्ग के अनेक स्थलों से और भी अनेक आकर्षक चीजें खरीद लीं । मार्ग में अब तक कोई बाधा नहीं उपस्थित हुई । मेरा यह विश्वास मजबूत होता गया कि मैं एक बहुत बड़ा समुद्री व्यापारी हो गया हूँ ।

"जहाज आगे बढ़ता जा रहा था । तभी कुछ हमसफर यात्री अपना माल बेचने के लिए सुभद्रा देश में कुछ दिन रुकना चाहते थे । उन्होंने मुझे भी सलाह देते हुए कहा कि हमारे माल की यहाँ बहुत मांग है और मुझे मुँहमांगा दाम मिल सकता है । जहाज केवल एक सप्ताह रुकनेवाला था । लेकिन पूरा माल बेचने में अधिक समय भी लग सकता था । इस पर कई लोगों ने सुझाव दिया कि किराये पर माल रखने के लिए गोदाम भी यहाँ मिल जायेंगे ।

"तब तक सुभद्रा देश के बन्दरगाह पर जहाज

लग चुका था । मैं अभी तक कोई निर्णय नहीं ले पाया था और द्विविधा में था कि यहाँ माल उतारूँ या न उतारूँ । तभी मुझे रत्नगुप्त दिखाई पड़ा ।'' यह कहकर उसने रत्नगुप्त की ओर संकेत किया ।

महाराज की नजर पड़ते ही रत्नगुप्त ने खड़ा होकर उनका अभिवादन किया ।

रत्नगुप्त सुभद्रादेश की राजधानी का रहनेवाला था और नगर का बहुत चतुर और अनुभवी व्यापारी माना जाता था । महाराज ने उसे गौर से देखा और सिर हिला कर मणिकर्ण को अपना बयान जारी रखने का संकेत किया । मणिकर्ण ने आगे बताया-''प्रभु ! रत्नगुप्त सचमुच ही बहुत दक्ष व्यापारी है । मुझे दुविधा में पड़े देख कर यह भाँप गया कि मैं समुद्री व्यापार में नया-नया हूँ । वह तुरन्त मेरे पास आया और अपना परिचय देते हुए मेरे व्यापार के बारे में पूछताछ की । मैंने सबकुछ सच-सच इस तरह बता दिया जैसे व्यापार में अपने भागीदार को बता देते हैं । मुझे उसकी नीयत पर तनिक भी सन्देह नहीं हुआ । यह शायद मेरी दूसरी भूल थी ।

''मुझसे सारा बिवरण जान लेने के बाद उसने बहुत स्नेहपूर्वक कहा, - बेटे, हफ्ते भर में अपना सारा माल बेच पाना संभव न होगा । तुम विदेशी हो, इसलिए स्थानीय लोग तुम्हें ठगने की कोशिश करेंगे । यहाँ के बाजार को समझने में समय लगेगा, लेकिन इसके लिए तुम्हें गोदाम लेना पड़ेगा जो बहुत महँगा पड़ेगा । और वह भी, राजा की अनुमति के बिना विदेशियों को गोदाम नहीं दिया जा सकता । राजा की अनुमति मिलने में भी बहुत समय लगने की संभावना है । तुम्हें देखते ही मेरे मन में न जाने क्यों आत्मीय भाव जाग पड़ा । मैं भी व्यापारी हूँ और मेरे पास पर्याप्त स्थान है । तुम्हारा माल मेरे घर से लगे गोदाम में सुरक्षित रहेगा और तुम भी मेरे यहाँ अतिथि के समान ठहर सकते हो । व्यापार में मेरी मदद की आवश्यकता हो तो वह भी कर सकता हूँ । आराम से अपना माल बेच कर घर लौट जाना ।

''इसकी मधुर बातें सुन कर मुझे ऐसा लगा मानों भगवान ने इसे मेरी सहायता के लिए ही भेजा है । मुझे तनिक भी इस पर सन्देह नहीं हुआ । मैंने जहाज से माल उतरवाया और गाड़ियों से इसके घर पर साथ ले गया । घर पहुँच कर उसने अपने नौकरों से माल उतरवा कर एक कमरे में रखवा दिया । और उसमें ताला लगा कर चाभी मुझे दे दी ।

''इसका इतना प्यार देख कर मुझे लगा कि जैसे मेरे पिता की आत्मा इसमें प्रवेश कर गई है और परदेश में मेरा पग-पग पर स्नेहसिक्त मार्गदर्शन कर रही है । मेरी प्रसन्नता की कोई सीमा न थी ।

''नहाने - धोने के बाद इसने मुझे स्वादिष्ट भोजन कराया । थकावट के कारण मैं गाढ़ी नींद में शाम तक सोया रहा ।

''रात्रि में स्वागत-सत्कार या मनोरंजन के बहाने वह मुझे विलास-मन्दिर ले गया, जहाँ सुन्दर नर्तकियों का नाच हो रहा था और दर्शक मदिरा पी रहे थे । और नशे में नर्तकियों के साथ ठिठोली भी कर रहे थे ।

''यह वातावरण मेरे लिए नया नहीं था, क्योंकि जब मैं पिताजी से व्यापार सीख रहा था तो मैं भी विलास-मन्दिरों में जाया करता था । किन्तु जब व्यापार की पूरी जिम्मेदारी सिर पर आ गई तो इससे दूर रहने लगा । बहुत दिनों के बाद फिर से वैसी जगह पर जाने के कारण पुरानी वृत्ति पुनः उभर आई और मदिरा के साथ नर्तकी के नृत्य में तल्लीन हो गया । किन्तु रत्नगुप्त शान्त होकर और वातावरण के प्रभाव से निस्पृह होकर केवल नृत्य देख रहा था । उसने न शराब पी, न नर्तकियों से बातचीत की । वह जल्दी लौट आना चाहता था, किन्तु मैं कुछ देर तक रुकना चाहता था, इसलिए वह भी देर तक रुका रहा । वहाँ जो भी खर्च हुआ, रत्नगुप्त ने ही चुकाया । मुझे एक कौड़ी भी देने नहीं दिया ।

''लौटते समय मार्ग में उसने बताया कि मणिकर्ण, तुम्हें माल बेचने में काफी परेशानी उठानी पड़ेगी, इसलिए तुम्हारी सहायता करने के ख्याल से मैं ही तुम्हारा माल खरीद लेता हूँ । यद्यपि तुम्हारे माल से मेरा व्यापार अलग है, फिर भी, मेरा विश्वास है कि छोटे व्यापारियों को तुम्हारा माल बेच कर थोड़ा-बहुत लाभ बचा पाऊँगा । तुम्हारा क्या विचार है? उसकी बात सुन कर मुझे बहुत खुशी हुई । मैं नशे में था । इसलिए इस पर बिना बिचारे हाँ कह दिया और घर जाकर निश्चिन्त होकर सो गया ।

''सुबह नींद टूटी तो रात की बात पर विचार करने लगा । नहा-धोकर नाश्ता करते समय मैंने उससे कहा, - ''रत्नगुप्त जी, आपने मेरी बड़ी सहायता की है और आप पर मुझे पूरा विश्वास है । फिर भी, आप ही मेरा सारा माल क्यों खरीदना चाहते हैं ? यह जानना चाहता हूँ ।

और यदि आप ही मेरा माल ले रहे हैं तो माल की आधी रकम मुझे पहले ही दे दें तो अच्छा रहेगा, क्योंकि अब मेरे पास धन अधिक नहीं रह गया है ।''

मेरी बात से वह नाराज होकर बोला, - ''अभी तो तुम्हारे माल का स्थानीय भाव भी पता नहीं किया है । फिर भी तुम्हारा माल खरीदने के लिए तैयार हूँ । आज बाजार जाकर इसका भाव पता करता हूँ ।तब तक मेरे पास दस हजार रुपये हैं । रख लो । शाम तक कुछ और धन का प्रबन्ध कर दूँगा । क्योंकि यह व्यापारिक लेन-देन का मामला है, इसलिए अच्छा होगा यदि इस कागज पर अपने हस्ताक्षर कर दो । समय मिलने पर इसके ऊपर विवरण लिखवा दूँगा ।''

''इतना कह कर उसने मुझे दस हजार रुपयों के साथ एक सादा कागज दे दिया । मैंने रुपये लेकर कोरे कागज पर दस्तखत कर दिये । उसके बाद रत्न गुप्त दिन भर अपने व्यापार के काम में व्यस्त रहा । मैं भी नगर में घूमता-फिरता रहा । उत्सुकता वश मैंने अपने माल का भाव जानने के लिए जब पूछताछ की तो बहुत आश्चर्यजनक बात यह मालूम हुई कि मेरे माल की यहाँ बहुत मांग है । यहाँ तक कि हमारे देश की अपेक्षा उस माल की यहाँ दस गुनी कीमत देने को तैयार हैं । बल्कि एक महीना बाद आयोजित होनेवाले बसन्तोत्सब तक तो उनके दाम बढ़ने के और भी आसार हैं ।

''जब मुझे यह सब पता चला तो मैं अपने भाग्य को कोसने लगा । मुझे इस बात पर ग्लानि हुई कि रत्न गुप्त को माल बेचने से पूर्व यहाँ के बाजार में उसका भाव क्यों नहीं पूछा । मुझे यह विश्वास हो गया कि रत्नगुप्त ने मेरे साथ धोखा किया और जानबूझ कर सत्य को छिपाया । उसे माल का भाव अवश्य ज्ञात था । मैंने बाजार के व्यापारियों से उसके आचरण के बारे में जब पूछताछ की तो सबने उसे ईमानदार और भरोसे का व्यापारी बताया । मैं कुछ समझ न सका और अन्तर्द्वन्द्व की मनः स्थिति में घर लौटा ।

''घर पर रत्नगुप्त मेरी प्रतीक्षा कर रहा था । मुझे देखते ही उसने कहा, - ''अकेले - अकेले किधर घूमने निकल गये थे मणिकर्ण?''

''मैंने उसे दिल की सारी बात बता दी और स्पष्ट रूप से पूछा, - ''जरा बताइये तो रत्नगुप्त जी, आप मेरे सारे माल के बदले कितना धन देनेवाले हैं?''

इस पर रत्नगुप्त ने चौंकते हुए तुरत कहा, - "कैसी बात कर रहे हो मणिकर्ण ? अपने माल के बदले पूरा दाम चालीस हजार वसूल कर लेने के बाद पूछते हो कि मैं कितना दूँगा । क्या मदिरा पान कर लिया है, इसलिए बहकी बातें कर रहे हो ।"

"उसकी यह बात सुन कर मैं भौचक्का रह गया । शरीर जम कर पत्थर हो गया जैसे काटो तो खून नहीं । उसने मुझे वह कागज दिखाया जिस पर मैंने हस्ताक्षर किये थे । तब वह कोरा था । लेकिन अब स्पष्ट अक्षरों में लिखा था कि मैंने अपना पूरा माल उसे चालीस हजार रुपयों में बेच दिया है । मैंने तो इसी विश्वास पर दस्तगत कर दिया था कि वह जो सत्य है वही लिखेगा । कभी कल्पना भी नहीं की थी पिता के समान स्नेह दिखाने वाला व्यक्ति मुझे इस प्रकार दिन दहाड़े लूट लेगा । मैंने तभी समझा कि व्यापार में किसी पर विश्वास करना, अजागरुक और असावधान रहना मूर्खता है और व्यापार संहिता के विरुद्ध है । मैंने अपने आप को बहुत कोसा । बहुत पछताया । अपनी भूल पर अपना सिर पीटा । लोगों के बीच चीख-चीख कर बताया कि रत्नगुप्त ने धोखे से मुझे लूट लिया है । लेकिन किसी ने विश्वास नहीं किया । किसी ने मेरे पक्ष का समर्थन नहीं किया । उल्टे वे मुझे ही धोखेबाज और अविश्वसनीय कहने लगे ।

"महाराज, निराश होकर मैं आप की न्याय सभा में उपस्थित हुआ हूँ । और आशा करता हूँ कि आप के राज्य में एक असहाय विदेशी नागरिक को न्याय मिलेगा और मुझे मेरा माल वापस कर दिया जायेगा ।

"हा, महाराज ! एक बात और । जिस कमरे में मेरा माल रखा है, उस कमरे की चाभी भी गायब कर दी गई । अब मेरे भाग्य का फैसला आप के हाथ में है ।" अपना यह लम्बा बयान देकर मणिकर्ण चुप हो गया ।

इस महीने जिनकी जयन्ती है

पिता डॉक्टर कृष्णधन घोष और माता स्वर्णलता के घर में कोलकाता में सन् १८७२ में १५ अगस्त को जन्मे श्रीअरविन्द बाल्यावस्था में दार्जिलिंग के एक आयरिश कान्वेंट स्कूल में पढ़ने के लिए भेज दिये गये । वहाँ से सात वर्ष की अल्प आयु में ही सन् १८७९ में उन्हें इंग्लैण्ड भेज दिया गया, क्योंकि उनके पिता चाहते थे कि उनके बेटे पर भारतीयता का कोई प्रभाव न पड़े ।

श्रीअरविन्द ने पहले लन्दन स्थित सेंट पॉल्स स्कूल में अध्ययन किया, जहाँ विद्यालय के सभी प्रमुख पुरस्कार इन्होंने अर्जित कर लिये । फिर इन्हें छात्रवृति देकर कैम्ब्रिज के किंग्स कालेज में भेज दिया गया। उन्होंने ऊँचे अंक प्राप्त कर ट्रिपोस की परीक्षा पास की । साथ ही भारतीय प्रशासनिक सेवा (इंडियन सिविल सर्विस) की खुली प्रतियोगिता भी उत्तीर्ण की । लेकिन वे प्रशासनिक सेवा में अंग्रेजों की नौकरी नहीं करना चाहते थे, इसलिए घुड़सवारी की परीक्षा में उपस्थित नहीं हुए । उस समय बड़ौदा के महाराज सर साया जी राव गायकवाड़ लन्दन में थे । उन्होंने अपने राज्य में उन्हें नौकरी देने का प्रस्ताव रखा । श्रीअरविन्द सन् १८९३ में भारत लौट आये और बड़ौदा में महाराजा के कालेज में अंग्रेजी और फ्रेंच के प्रोफेसर की नौकरी कर ली ।

श्रीअरविन्द

अगले कुछ ही वर्षों में कई अन्य भारतीय भाषाओं के साथ उन्होंने संस्कृत पर भी अधिकार कर लिया, जब कि वे पहले ही ग्रीक, लैटिन आदि कई भाषाओं में निष्णात थे । उन्होंने भारतीय शास्त्रों तथा अन्य साहित्य का अध्ययन और योग का अभ्यास भी करना शुरू कर दिया । उन्होंने गुप्त रूप से अपने कुछ विश्वासपात्र अनुयायियों की सहायता से ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संघर्ष के लिए भिन्न-भिन्न स्थानों पर भारतीय युवकों को तैयार किया ।

सन् १९०६ में वे बड़ौदा छोड़ कर कोलकाता आ गये। कुछ दिनों के लिए वे देशभक्तों द्वारा स्थापित प्रथम राष्ट्रीय कालेज के प्रिंसिपल रहे । तत्पश्चात वे क्रान्तिकारी विचारों के समाचार पत्र 'बन्दे मातरम' के सम्पादन में व्यस्त हो गये ।

सन् १९०७ में श्रीअरविन्द और लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने मिलकर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को इसके सूरत अधिवेशन में एक क्रान्तिकारी मोड़ दिया । वास्तव में, मातृभूमि की पूर्ण स्वाधीनता की मांग करनेवाले श्रीअरविन्द भारत माँ के प्रथम पुत्र थे ।

सन् १९०८ में वे प्रसिद्ध अलीपुर षड्यंत्र मुकदमे के तहत बन्दी बना लिये गये । उन्हें एक वर्ष के लिए काल कोठरी की सजा दी गयी । इस अवधि में इन्हें अपूर्व आध्यात्मिक अनुभूतियाँ हुई । इन्हें यद्यपि रिहा कर दिया गया किन्तु प्रशासन ने इन्हें पुनः बन्दी बनाने और देश निकाला की सजा देने का प्रयास किया । लेकिन, इन सबसे अनजान, श्रीअरविन्द, फ्रांसिसी उपनिवेश पांडिचेरी आ गये ।

यहाँ इनके जीवन का एक नया आयाम शुरू हुआ जहाँ वे पूर्णतया योग के प्रति निवेदित हो गये और योग के माध्यम से जीवन के रहस्य के अनुसंधान में लग गये । उन्होंने यह अनुभव किया कि सृष्टि के विकास में मानव अन्तिम चरण नहीं है । मनुष्य एक नये व्यक्तित्व में और भी विकसित होगा जो मन से नहीं, बल्कि मन से अत्यधिक ऊँची चेतना से चालित होगा । उस चेतना को उन्होंने अतिमानसिक चेतना कहा है ।

भारत को स्वतंत्रता श्रीअरविन्द के जन्म दिन पर मिली ।

आज मानव-नियति के प्रति श्रीअरविन्द के दृष्टिकोण में विश्व भर में लोगों की रुचि निरन्तर बढ़ रही है ।

एक महान सभ्यता की झाँकियाँ :
युग-युग में सत्य के लिए इसकी गौरवमयी खोज

8. भारत भूमि कैसे पवित्र बन गई !

दशहरे की छुट्टियाँ थीं । पड़ोस के कुछ लड़के-लड़कियों को अपने मित्र संदीप और चमेली को मिले बड़े खजाने की भनक अब तक मिल चुकी थी। पहले तो उन्हें आश्चर्य हुआ कि ये भाई-बहन विगत छुट्टियों की तरह उनके साथ खेलने क्यों नहीं आये । फिर उन्होंने चुपचाप यह पता लगाया कि ये दोनों एक वयोवृद्ध के साथ बराबर घूमने जाते हैं और उनकी बात बहुत ध्यान से सुनते हैं । एक दिन एक अन्य भाई-बहन की जोड़ी - किशोर और रोमा ने नदी किनारे घूमते हुए प्रो. देवनाथ और संदीप तथा चमेली का पीछा किया । संदीप और चमेली प्रोफेसर द्वारा वर्णित आख्यान सुनने में इतने तल्लीन थे कि उन्होंने आधे घंटे तक छिपकर पीछे आते हुए अपने मित्रों की ओर ध्यान नहीं दिया । जब प्रोफेसर ने कहानी खत्म की तब किशोर अपने विस्मय को रोक न सका और उसके मुख से अनायास ही निकल पड़ा - ''आह! कितना मधुर!'' तभी तीनों ने पीछे मुड़ कर देखा ।

यह निस्सन्देह संदीप और चमेली के लिए सुखद आश्चर्य था । उन्होंने जब ग्रैंडपा से अपने दोस्तों को मिलाया तो वे बड़े प्रसन्न हुए । ''मुझे आश्चर्य हो रहा था कि अपने पौत्र-पौत्री के मित्रों से भेंट क्यों नहीं हो रही है । किशोर, रोमा ! मुझे क्षमा कर देना यदि मेरे कारण तुम सब अपने मित्रों से मिल न पाये ।'' सदा हँसमुख रहनेवाले मिलनसार स्वभाव के प्रोफेसर ने कहा ।

विश्वावसु

...ी गाथा
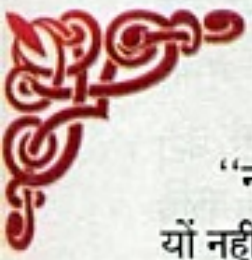
''नहीं सर, हम लोग गलती करनेवालों को यों नहीं छोड़ा करते । आप को हमें भी कहानियाँ सुनानी होंगी ।'' रोमा ने कहा ।

''क्यों नहीं ! क्योंकि अब मैं दो और पौत्र-पौत्री पाकर अधिक समृद्ध हो गया हूँ, मैं इसका मूल्य चुकाने को तैयार हूँ ।'' प्रोफेसर ने हँसते हुए कहा ।

यह निश्चय हुआ कि अगले दिन प्रोफेसर के साथ कहानी-सत्र में किशोर और रोमा भी शामिल होंगे । लेकिन वे जॉर्ज और जूली नाम के दो और मित्रों को ले आये । दिन ढलने लगा था । वे सब संदीप के माता-पिता की कोठी के लॉन की मखमली घास पर बैठ गये । लेकिन तभी माइक्रोफ़ोन पर बधिर कर देने वाली ऊँची आवाज में फिल्मी गाने सुनाई पड़े ।

''लगता है, दुर्गा पूजा के उत्सव के कारण गाने आ रहे हैं ।'' किशोर ने टिप्पणी की ।

''दूसरों की भावना के प्रति लोगों की संवेदन शून्यता के कारण ही ऐसा होता है । प्राचीन काल से ऐसे उत्सवों के अवसर आये और चले गये । वर्ष पर वर्ष लोगों ने देवी माँ का आह्वान किया । गीतों के रूप में प्रार्थनाएँ उनके पास पहुँची । किन्तु किसी की भक्ति के कारण दूसरों को कोई परेशानी नहीं हुई । माइक्रोफोन के कारण अब ऐसा हो रहा है । गीतों की ऊँची आवाज बताती है कि उत्सवों के आयोजक घमण्डी हैं। बच्चो ! जब तुम्हें ऐसे अवसरों पर उत्सव आयोजन करना पड़े तो तुम्हें इस बात

का ध्यान रखना चाहिये कि तुम्हारे कार्यक्रम से किसी को परेशानी या असुविधा न हो ।'' प्रोफेसर ने कहा ।

''सर, कैसे और कब दशहरे की परम्परा शुरू हुई?'' रोमा ने जिज्ञासा की ।

''हमें सृष्टि के आरम्भ में जाना होगा । अध्यात्म तथा भारत के महान शास्त्रों का यदि तुम अध्ययन करो तब तुम्हें ज्ञात होगा कि

सृष्टि एक ऐसी प्रक्रिया थी जिसमें अनन्त और असीम ने अपने को ससीम वस्तुओं में छिपा लिया । यह एक ऐसा खेल है, जिसे हम आँख-मिचौनी कहते हैं । असीम आत्मा इसे आत्मानुसंधान के लिए करती है ।

''ब्रह्मा सृष्टिकर्ता हैं । हैं न ? उनका एक पुत्र दक्ष देवों, अर्ध देवों, असुरों, वनस्पति आदि की सृष्टि के लिए उत्तरदायी था । दक्ष की उत्पति ब्रह्मा के दायें अंगूठे से हुई थी । उसका विवाह विरानी से हुआ जो ब्रह्मा के बायें अंगूठे से पैदा हुई थी । शायद यही कारण है कि आज तक दुल्हन दुल्हा की बायीं ओर बैठती है । उसके पचास बेटियाँ थीं । उनमें से ४९ का विवाह देवताओं और ऋषियों से हुआ जो मानव नहीं बल्कि अतिभौतिक सत्ताएँ थे । मनुष्यों की उत्पत्ति उनसे ही हुई ।

''जो भी हो, दक्ष की सबसे छोटी बेटी सती ने अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध शिव से विवाह कर लिया । दक्ष ने इसके लिए उसे कभी नहीं क्षमा किया । उसके तुरन्त बाद दक्ष ने एक यज्ञ का आयोजन किया । उसने इस अवसर पर सभी देवताओं और ऋषियों को आमंत्रित किया, अपनी सभी बेटियों और दामादों को बुलाया, किन्तु शिव और सती को निमंत्रण नहीं भेजा । फिर भी सती को यह समाचार मालूम हो गया और वह अपने पिता के घर के लिए चल पड़ी, जो कि हरद्वार के पास कनखल में था । शिव के पास निमन्त्रण नहीं आया था, इसलिए उन्होंने सती को जाने से मना किया । लेकिन सती ने जोर देकर कहा कि माता-पिता के घर जाने के लिए बेटी को निमन्त्रण की आवश्यकता नहीं है ।

''दुर्भाग्यवश, दक्ष सती को देखते ही शिव के लिए अपमानजनक शब्दों का प्रयोग करने लगा । वह कहने लगा कि शिव आवारा है, खानाबदोश है, वेशभूषा ठीक नहीं रखता और भूत-प्रेतों का स्वामी है ।

''सती पति का अपमान सह न सकी और यज्ञकुंड में कूद कर जल मरी । सभी इस अप्रत्याशित घटना से चकित रह गये । कुछ भूतों ने, जो सती के साथ रक्षक बन कर आये थे, कैलास जाकर यह दुखद समाचार शिव को

बताया । शिव ने क्रोधित होकर अपनी एक जटा पृथ्वी पर पटक दी । इससे एक सहस्रबाहु असुर - वीरभद्र प्रकट हुआ ।

''वीरभद्र ने कंखल आकर घोर उपद्रव मचा दिया और यज्ञ को नष्ट-भ्रष्ट कर अतिथियों को खदेड़ दिया । तुरन्त शिव भी वहाँ आ पहुँचे । उन्होंने अपने त्रिशूल से दक्ष का सिर काट दिया। जब शिव का क्रोध शांत हुआ, तब उसके कंधे पर बकरे का सिर जोड़ दिया गया ।

''शिव सती के शरीर को अपने कंधे पर रख कर और सब कुछ भूल कर पूरे देश में भ्रमण करते रहे । विष्णु ने सती के शरीर को अपने सुदर्शन चक्र से खंड-खंड काट दिया । वे अलग-अलग स्थानों पर गिरे । सती वास्तव में माँ भगवती स्वयं थीं जो बड़े ऋषियों को ज्ञात था । जहाँ-जहाँ सती का अंग गिरा, वहाँ-वहाँ उनकी पूजा का स्थल बन गया । ऐसे पवित्र स्थल कश्मीर से कन्या कुमारी तक अनेक बन गये ।

''इसीलिए स्थूल भौतिक स्तर पर भी भारत की भूमि पावन मानी जाती है ।

''यह इतने सुदूर अतीत में घटित हुआ कि माँ भगवती की पूजा की प्राचीनता का कोई लिखित काल-विवरण नहीं है । इसी की शक्ति दुर्गा, काली, चंडी तथा कई अनेक नामों व गुणों के रूप में अवतरित होती है ।

''क्या यह आख्यान है?'' चमेली ने पूछा ।

''आख्यान कह सकते हो । लेकिन इसे पौराणिक कथा कहना अधिक उपयुक्त होगा । पौराणिक कथा ऐसी प्राचीन कहानी होती है जिसमें कोई महान सत्य छिपा रहता है । ऐसी प्राचीन कथाओं के संग्रह या अध्ययन को पुराण शास्त्र कहते हैं । भारतवर्ष इस शास्त्र में बहुत समृद्ध है ।'' इतना कह कर ग्रैंड पा कुछ प्रमुख आगन्तुकों से मिलने के लिए खड़े हो गये ।

''हम कुछ और पौराणिक कथाएँ कब सुन सकते हैं, सर?'' अशोक ने प्रश्न किया ।

''जब तुम्हारी इच्छा हो ।'' प्रोफेसर ने हँसते हुए कहा ।

सास और बहू की अच्छाई

सरला एक अल्हड़ एवं लापरवाह लड़की थी जो सालिग्राम में अपने झगड़ालू स्वभाव के लिए विशेष रूप से चर्चित थी । लोगों में परस्पर मनमुटाव पैदा करना वह बखूबी जानती, दिन भर लोगों को उकसाती रहती तथा प्रतिदिन कोई न कोई बखेड़ा खड़ा कर देती । उसके माता-पिता अपनी बेटी के स्वभाव से परेशान और चिंतित रहते । वे इस बात से डरते रहते कि पता नहीं ससुराल जाने पर वह क्या कर बैठे ।

कुछ दिनों के बाद सरला का विवाह एक संभ्रान्त परिवार के युवक से तय हुआ । उसका होने वाला पति पढ़ा-लिखा और बहुत ही शांत स्वभाव का था और गाँव के ही किसी विद्यालय में अध्यापक था । पैतृक-संपत्ति भी अच्छी-खासी थी । ननद के ईर्ष्या - द्वेष की भी संभावना नहीं थी, क्योंकि युवक अपने माँ-बाप की एकमात्र संतान था । इस प्रकार यह परिवार हर प्रकार से अच्छा था, परंतु सुना जाता था कि दूल्हे की माँ सुभद्रा बेहद झगड़ालू व तुनक मिजाज है । उसकी डाँट डपट से डर कर कोई नौकरानी टिकती ही नहीं थी । वह अनायास ही झगड़े मोल ले लेती, या दूसरों के दिल को ठेस पहुँचाती । वह चाहती थी, सब उसी की प्रशंसा करते रहें ।

सरला एवं सुभद्रा के स्वभाव के कारण दोनों परिवार के लोग सोच में पड़ गये । वे यह रिश्ता पक्का करने में संकोच कर रहे थे । किन्तु सरला को इस शादी में कोई आपत्ति न थी, न ही सुभद्रा को । सुभद्रा सोचती - ''मैं तो एक अच्छी औरत हूँ, पर दुर्भाग्य की बात है कि कोई इसे मानता नहीं । यदि सरला अल्हड़ एवं झगड़ालू स्वभाव की है तो उसके आने पर मेरी अच्छाई सबको मालूम हो जायेगी । वह अपने पति से कहती, हम सरला को ही अपने घर की बहू बनायेंगे ।''

उधर सरला सोचती, ''अच्छा है कि सास झगड़ालू हो । मैं जब उसके साथ रहूँगी, तो सब अपने आप समझ जायेंगे कि मैं कितनी अच्छी

कविता शाह

हूँ ।'' उसने अपने माता-पिता से कहा, ''राजा मुझे पसन्द है, मुझे यह शादी मंजूर है ।''

राजा को भी सरला अच्छी लगी । थोड़े ही दिन बाद उनकी शादी हो गई । सरला ससुराल चली गई । उसके माता-पिता अब भी निश्चिंत नहीं थे । उन्हें डर लगा रहता कि जाने कब उन्हें बेटी की क्या-क्या शिकायतें सुनने को मिलें । उन्हें यह भी आशंका थी कि उनकी बेटी जाने कब ससुराल छोड़ कर मायके आ धमके ! परन्तु आशा के विपरीत ऐसा कुछ नहीं हुआ । सरला के घर में शांति ही शांति थी । राजा अपनी पत्नी के साथ आनन्दपूर्वक रह रहा था । वह सरला को पाकर बेहद प्रसन्न था ।

उधर सास-बहू के परस्पर रवैये ने सबको आश्चर्य में डुबा दिया । सरला जब भी आस-पड़ोस के लोगों से मिलती, अपनी सास की प्रशंसा के पुल बाँधती । सुभद्रा भी जब अपनी हमउम्र औरतों में बैठती, तो अपनी बहू के सद्गुणों का बखान करते न थकती । दिन बीतते रहे .... ।

काफी दिनों के बाद सरला अपने मायके आई । वहाँ भी उसने यही कहा कि उसकी सास बहुत अच्छी है । जो कोई भी उसकी सास के बारे में पूछता, वह यही कहती कि उसकी सास बहुत स्नेही है, गुणी है, सास हो तो ऐसी हो !

सरला की माँ ने एक दिन उससे कहा, ''बेटी, मैं तुम्हारे भाग्य पर बहुत प्रसन्न हूँ ।'' इस पर सरला चिढ़ कर बोली, ''अब ऐसा क्या हो गया कि तुम मेरे भाग्य पर प्रसन्न हो?''

''ससुराल में बेटी खुश रहे, सुखी रहे, इससे बढ़ कर माँ-बाप को क्या चाहिये? मुझे डर था कि तुम्हारी सास तुम्हें परेशान करेगी ।''

''तुम्हें यह डर क्यों था कि मेरी सास मुझे
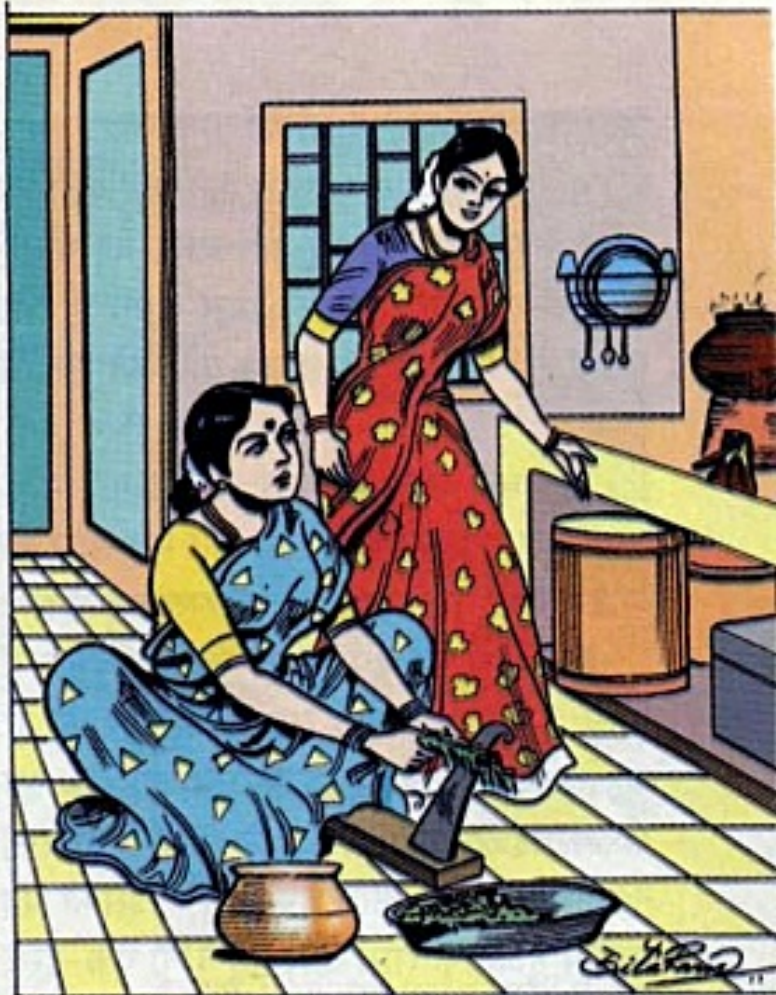
सतायेगी?'' सरला ने पूछा । उसकी माँ बोली, ''ऐसा सभी कहते हैं कि तुम्हारी सास झगड़ालू स्वभाव की है।''

इस पर सरला बोल उठी, ''जब तुम इस बात को जानती हो तो मेरी तारीफ़ क्यों नहीं करती कि मैं ऐसी चुड़ैल सास की भी प्रशंसा पा सकी ।'' माँ ने कहा, ''सब जानते हैं कि उसकी प्रशंसा पाना, उसे खुश रखना मुमकिन नहीं. पर तुम उसका प्रेम पा सकी, इसीलिए कहती हूँ कि तुम भाग्यशाली हो ।''

यह सुन कर सरला ने कहा, ''यह सच नहीं है माँ । मेरी सास मुझे सदा कष्ट देती है, डाँटती रहती है, पर यह मेरी अच्छाई है कि मैं फिर भी उसकी प्रशंसा करती रहती हूँ, उसे आसमान पर बिठाती हूँ । तुम सगी माँ होकर भी मेरी इस अच्छाई की तारीफ़ नहीं करती तो मुझे लगता है

कि मेरी सारी मेहनत व्यर्थ गई ।''

माँ ने अपनी भूल स्वीकार करते हुए कहा कि उसने ऐसा तो सोचा भी नहीं था । वह बोली, ''मैं अभी तुम्हारी सास के पास जाती हूँ और कहती हूँ कि वह अपनी बहू को क्यों सताती है?''

तुम्हें वहाँ जाने की कोई जरूरत नहीं माँ ! तुम केवल मेरी अच्छाई जानो और मेरी सास की बुराई समझो, यही काफी है ।'' सरला ने कहा ।

सरला की माँ चुप हो गई पर उसे चैन नहीं मिला । उसने यह बात सरला की सास की दूर की रिश्तेदार मीनाक्षी से कही और उससे प्रार्थना की कि वह सुभद्रा को समझाये । इस पर मीनाक्षी ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, ''इसका यह मतलब हुआ कि सास और बहू दोनों एक-दूसरे से कम नहीं है ।''

सरला की माँ ने पूछा, ''बताओ तो सही, असल बात क्या है ? अपनी हँसी रोकते हुए मीनाक्षी ने कहा, - ''पिछले महीने मैं सरला की सास से मिली थी । उसके मुँह से सरला की खूब प्रशंसा सुन कर मैं बोली, ''ऐसी बहू का मिलना तुम्हारी खुशनसीबी है ।'' इस पर सुभद्रा आपे से बाहर हो गई । बोली, सरला का स्वभाव तुम खुद जानती हो । वह तो मुझसे झगड़ती ही रहती है । ताने कसती है, दिन भर मुझे सताती है, फिर भी मैं उसकी तारीफ़ करती हूँ । मेरी उदारता की सराहना करने की बजाय तुम मेरे भाग्य को सराह रही हो । तुम्हें तो मेरी प्रशंसा करनी चाहिये ।''

मीनाक्षी के मुख से सच सुन कर सरला की माँ सन्न रह गई । वह समझ गई कि सास बहू दोनों स्वयं को एक दूसरे से अच्छा साबित करने के उद्देश्य से नाटक कर रही हैं । दोनों का उद्देश्य दूसरे को अपने से खराब साबित करना है, किन्तु यह बहुत अच्छा हुआ कि उनके इस नाटक से उनका परिवार सुखी है । ऊष्णे ऊष्णेण शीतलं शायद इसी को कहते हैं, मीनाक्षी ने कहा ।

सरला की माँ भी बिना कुछ बोले वहाँ से चली गई ।

कावेरी के किनारे – XI

यात्रा का अंतिम पड़ाव

कहानी : जयंती महालिंगम ◆ चित्रण : गौतम सेन
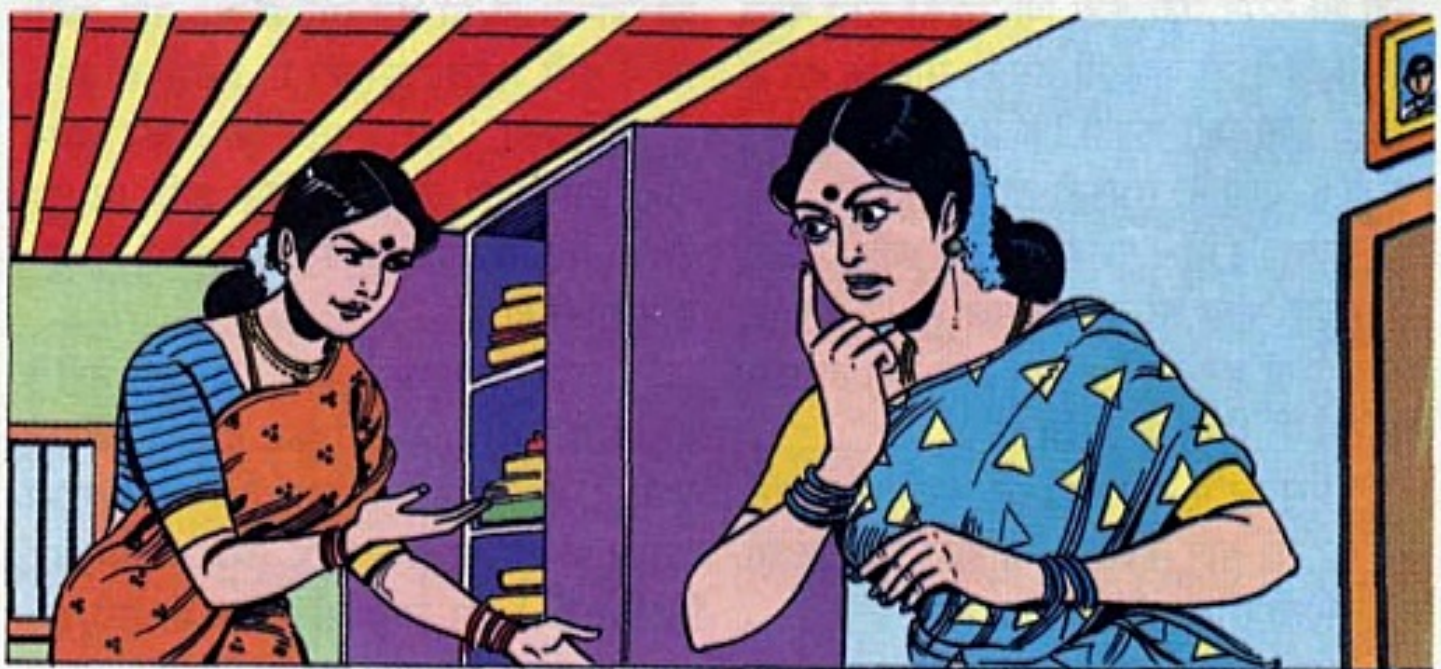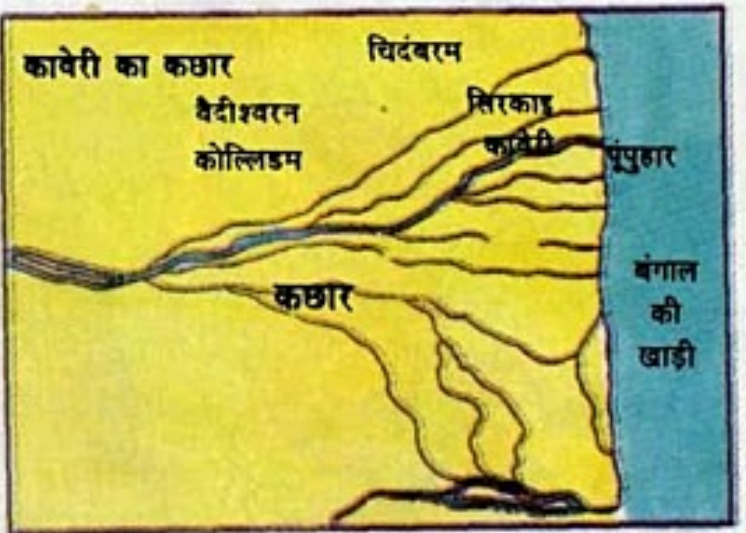
वैदीश्वरन कोइल कावेरी के किनारे पर बसा एक छोटा-सा नगर है. इसका एक ही मुख्य मार्ग है, जिस पर शिव का प्राचीन मंदिर खड़ा है. यहां शिव को उपचार के देवता के रूप में पूजा जाता है. अर्थात वे यहां वैद्यों के वैद्य हैं. यह मंदिर भी तमिलनाडु के प्रत्येक मंदिर की तरह ही है, लेकिन इसकी एक विशेषता है: यह मंदिर अगस्त्य नादि जोसियर्स यानि ज्योतिषियों के लिए स्वर्ग है. यहां के ज्योतिषी ऐसा दावा करते हैं कि उनके पास ऐसे प्राचीन ताड़-पत्र हैं, जिन पर प्रत्येक व्यक्ति का भूत, वर्तमान और भविष्य लिखा हुआ है. ऐसा विश्वास किया जाता है कि ये भविष्यवाणियां हजारों वर्ष पहले ऋषि अगस्त्य द्वारा लिखी गयी थीं. वैदीश्वरन कोइल में ऐसे कई ज्योतिषी हैं. भविष्य बताने का उनका पारंपारिक नियम यूं है : ज्योतिषी पहले आपके अंगूठे का निशान लेता है. फिर वह अंदर जाता है, पास ही रखे ताड़-पत्रों की थप्पी से एक ताड़-पत्र निकालता है. लगभग एक या दो घंटे बाद वापस आकर वह आपको अपने व्यापार, परिवार और भूतकाल में हुई बातें बताता है. कुछ लोगों के लिए वे चालबाज हैं. लेकिन ज्यादातर लोग उनकी भविष्यवाणियों और विद्या पर पूरा विश्वास रखते हैं.

वैदीश्वरन कोइल और चिदंबरम के बीच में तमिलनाडु के एक प्रसिद्ध शैव संत तिरुज्ञानन सम्बंदर का जन्म स्थान है. सिरकाइ भी यहां पैदा हुए संगीतकारों के लिए सुप्रसिद्ध है. सम्बंदर के बारे में कहा जाता है कि उन्होंने केवल तीन वर्ष की आयु में ही तमिल धुन पर गाया जाने वाला ग्यारह पदों का गीत गाया था.

कावेरी की उत्तरी शाखा कोलेरून अथवा कोल्लिडम के बिलकुल मुंहाने पर चिदंबरम नगर बसा हुआ है. यहां के

चिदंबरम का नटराज मंदिर

नंदनार की इच्छा थी कि एक बार चिदंबरम में शिव के दर्शन करूं

सुप्रसिद्ध नटराज मंदिर में आकाशलिंगम् स्थापित है. आकाश, पंचभूतों में से एक तत्व है. यहां भगवान शिव की आनंद-तांडव की मुद्रावाली मूर्ति की पूजा की जाती है. इस मूर्ति में भगवान शिव का बायां पैर हवा में उठा हुआ है. पुराणों के अनुसार यही वह स्थान है जहां एक समय शिव और पार्वती के बीच नृत्य-स्पर्धा हुई थी. पार्वती शिव की सभी मुद्राओं का प्रतिउत्तर देती जा रही थीं, इससे यह प्रमाणित हो रहा था कि दोनों के बीच निर्णय संभव नहीं. लेकिन अंत में भगवान शिव ने अपना एक पैर उठाया और कंधे पर रख लिया. शिष्टाचार एवं नारी-मर्यादावश पार्वती ऐसा नहीं कर सकी और पराजय में अपना सिर झुका लिया.

दार्शनिक विचारों के आधार पर भगवान शिव का नृत्य एकता का प्रतीक, अस्तित्व की गति और सजृन तथा विनाश की सनातन प्रक्रिया है. इस मंदिर के आठ विशाल गोपुरमों की दोनों ओर भरतनट्यम की 108 विभिन्न मुद्राएं उकेरी गयी हैं.

सही तौर पर कोई नही बता सकता कि इस मंदिर का निर्माण कब हुआ था. नटराज को अपना संरक्षक देवता मानने वाले चोल शासकों ने इस मंदिर की छत को सोने से मढ़ा. पांड्यों और नायकों ने भी इस मंदिर के लिए समय-समय पर धन दान किया और निर्माण में भी सहायक होते रहे.

चिदंबरम मंदिर से जुड़े एक महानायक हुए – नंदनार. वे सेक्कीयार और गोपालकृष्ण भारती (नंदन चरित्रम्) नाम से अमर हो गये. नंदनार सचमुच कीचड़ में से निकले हुए अनमोल रतन की तरह थे. वे परैय थे, नीची जाति के ढोलकिया. लेकिन उनके मन में बचपन से ही शिव के प्रति अटूट वअसीम श्रद्धा थी. उनकी उम्र के बच्चे जब मिट्टी से खिलौने बनाया करते, तो ये शिवलिंगम् बनाकर उसकी पूजा किया करते. उनकी बहुत बड़ी इच्छा थी कि वे थिल्लई या चिदंबरम के नटराज मंदिर के दर्शन करें. वे अपने-आप से और दूसरों से अक्सर यह कहा करते थे कि ''मैं कल थिल्लई जा रहा हूं.'' कई वर्षों तक वे यही कहते रहे. लोग उनका वास्तविक नाम तक भूल गये. वे अब 'नालइ-प-पोवान' (वह, जो कल जाएगा) नाम से पुकारे जाने लगे. अंततः उनके धैर्य का बांध टूट गया, वे चिदंबरम के लिए चल पड़े. लेकिन उन्हें अपनी नीची जाति का विचार आया. शहर के बाहरी छोर पर ही खड़े होकर वे कांपने लगे. कई दिनों तक वे नगर के चक्कर काटते रहे,

लेकिन मंदिर में जाने का साहस नहीं जुटा पाये. एक रात वे यह सोचने लगे कि उनके और आराध्य शिव के मिलन के बीच उनकी छोटी जाति ही आ रही है, वर्ना वे जल्दी ही भगवान शिव के दर्शन कर लेते. ऐसा सोचते-सोचते वे सो गये. उस रात उनके सपने में भगवान शिव प्रकट हुए. उन्होंने उनसे कहा कि तुम मंदिर की तरफ बढ़ो. उसी रात भगवान शिव मंदिर के पुजारी के सपने में भी आये और उसे आदेश दिया कि मेरा एक महान भक्त मंदिर में आनेवाला है, उसके स्वागत की तैयारी करो. नंदनार भगवान शिव की पूजा करने कनकसभा में पहुंचे, वहां ब्राह्मणों ने आंखे फाड़-फाड़कर देखा कि महान शिवभक्त नालइप्पोवान अपने आराध्य की मूर्ति में विलीन हो गये.

अपने स्रोत कोडगु से 765 किमी का सफर तै करती हुई कावेरी बंगाल की खाड़ी में पूंपुहार नामक स्थान पर एक छोटी धारा के रूप में ही मिलती है.

पूंपुहार प्राचीन चोल साम्राज्य का कावेरीपूंपट्टिनम नामक बंदरगाह था. यूनानी भौगोलिकशास्त्री टॉलमी के अनुसार यह पौराणिक कथाओं में वर्णित कावेरी का प्रमुख वाणिज्य-केंद्र था.

दूसरी शताब्दी के अंत तक यशस्वी रहा यह नगर, कभी एक व्यस्त बंदरगाह था. यहां से रोम तक व्यापार किया जाता था. बाद में इसका बड़ा भाग समुद्र में समा गया.

हाल में कुछ पुरातत्त्ववेत्ताओं ने खुदाई में ईंटों की एक पूरी और एक टूटी हुई दीवार प्राप्त की है. उनके अनुसार ये निर्माण संगमकाल (3 री शताब्दी ई.पू. – 2 री शताब्दी ई.पू.) के हैं. राष्ट्रीय महासागर विज्ञान संस्था, गोवा की समुद्री खोजों से यह पता चला है कि ये दीवारें बंदरगाह का भाग हो सकती हैं. पूंपुहार के आस-पास की गयी खुदाई से पकी हुई मिट्टी के बर्तन, घेरदार कुएं, रोमन सिक्के, ईंटें, चूनापत्थर के स्तंभ और लाल तथा काले बर्तनों के ठीकरे प्राप्त हुए हैं. पल्लावनीश्वरम के पास ही एक बौद्ध विहार भी खोज निकाला गया है, यह एक सुंदर निर्माण है.

1970 में पूंपुहार में एक सुंदर, सात मंजिला सिलापदिकरम कला संग्रहालय बनाया गया है. इस पर इलांगो आडिगल के महाकाव्य 'सिलापदिकरम' (पायल) से लिए गए चित्र उकेरे गये हैं. चेरा राजकुमार इलांगो ने इसमें पूंपुहार में रहनेवाले एक समृद्ध दंपति कन्नगि और

चिदंबरम मंदिर के प्रमुख देवता, नटराज

कोवलन की भावनात्मक कहानी लिखी है. कोवलन राज नर्तकी माधवी से प्रेम करने लगता है और उसी पर अपना समय और धन खर्च करता है. उपेक्षिता कन्नगि प्रार्थनाएं करती है और अपने पति के लौट आने की प्रतीक्षा करती रहती है. समय बीतता गया कन्नगि की प्रार्थनाएं रंग लायीं और कोवलन को अपनी मूर्खता पर पछतावा हुआ. वह कंगाल होकर लौटा. पति-पत्नी ने निर्णय लिया कि वे अपना भाग्य आजमाने मदुरै जाएंगे. कावेरी के साथ-साथ की गयी इस यात्रा का बहुत ही सरस एवं मंत्रमुग्ध वर्णन राजकुमार इलांगु ने किया है. मदुरै पहुंचकर कोवलन कन्नगि की एक पायल एक सुनार को बेचता है. उस सुनार ने कुछ समय पहले पांड्य रानी की एक पायल चुरायी थी. उसके लिए यह अच्छा अवसर था कि वह अपनी स्थिति सुरक्षित कर ले. राजा के यहां उसने कोवलन पर रानी की पायल चोरी करने का आरोप लगाया. राजा ने शीघ्रता से निर्णय लिया, कोवलन द्वारा की गयी निर्दोषता की याचना भी अस्वीकार कर दी गयी और उसे मौत के घाट उतार दिया गया. जब कन्नगि को पता चला तो वह क्रोध से पागल हो गयी. रानी के सामने पहुंच कर उसने इसका विरोध किया. उसने रानी की दूसरी बची हुई पायल छीन ली और उसे तोड़ कर बिखेर दिया और बताया कि इसमें मोती जड़े हुए हैं. अपनी पायल के साथ भी उसने ऐसा ही किया और प्रमाणित किया कि इसमें मणियां जड़ी हुई हैं. यह देख कर राजा और रानी अवाक रह गये. उन्हें बहुत पछतावा हुआ और दुःख में उन्होंने अपने प्राण पखेरू छोड़ दिये. कन्नगि ने अपना बायां स्तन फाड़ डाला और मदुरै को श्राप दे दिया. सारी नगरी आग की लपटों से घिर गयी और दुखियारी कन्नगि नगरी में घूमती रही. अंत में जैसे कावेरी समुद्र से मिलकर अपना लक्ष्य पा लेती है, उसी तरह कन्नगि रथ पर बैठ कर कोवलन से मिलने स्वर्ग की ओर चली गयी.

पूंपुहार के पास कावेरी समुद्र से मिल जाती है.

रंगा की कहानी

रंगा को बचपन से अपनी कहानी सुनाना अच्छा लगता था । लेकिन उसकी बेहद नीरस और शैतान की आँत की तरह लम्बी कहानी सुनने के लिए किसी के पास समय न था ।

जब पिता को अपनी कहानियाँ सुनाना चाहता तो वे खेती के काम में व्यस्त हो जाते । माँ को सुनाना चाहता तो वह घर के काम-काज में लग जाती । दादा जी को गीता और रामायण पढ़ने से फुरसत नहीं थी । दादी को यद्यपि कोई काम न था, फिर भी नौकरों को डाँटने-डपटने में उसका सारा समय चला जाता, बल्कि चौबीस घंटे भी उसके लिए कम पड़ जाते । उसने सोचा कि चलो फूफी को कहानियाँ सुनाते हैं । वह तो अभी छोटी है । अभी शादी हुई नहीं । घर में उसके लिए कोई खास काम नहीं है । उसके पास तो समय ही समय है । लेकिन जब भी रंगा अपनी फूफी को कहानी सुनाने लगता, वह टो टुक जवाब देती, - ''तुम्हारी नीरस कहानियों के लिए मेरे पास समय नहीं है । मुझे तो अपने भविष्य के सपने देखना अच्छा लगता है ।''

रंगा को अधिक कष्ट तो तब होता जब उसके दोस्त भी उसकी कहानी सुनने से इनकार कर देते । साथ खेलने के लिए सब तैयार हो जाते, लेकिन जब रंगा उन्हें कहानियाँ सुनाने लगता तो वे भाग जाते । उसकी कहानी दरअसल महाभारत की कहानियों से भी अधिक लम्बी होती । महाभारत की कहानियाँ रोचक होती हैं, इसलिए लम्बी होते हुए भी लोग सुनना पसन्द करते हैं । पर रंगा की कहानी का कोई सिर-पैर नहीं होता । कोई कथानक या कोई उद्देश्य नहीं होता । इधर-उधर की बातों को जोड़ता हुआ वह कहानी को बहुत लम्बी बना देता। एक घंटे तक कहानी सुनने के बाद यदि कोई पूछता कि क्या कहानी खत्म हो गई, तो वह कहता, खत्म कहाँ, अभी-अभी तो शुरू की है ।

इस तरह बेचारा रंगा अपनी कहानी के श्रोता

के अभाव में बड़ा दुखी रहता था । इसलिए उसने भिखारियों को खाना का लालच देकर अपनी कहानी सुनाना शुरू किया । लेकिन कुछ ही दिनों में वे भी ऊब गये और यह कह कर भाग गये कि तुम्हारी कहानी सुनने से तो भूखा रहना ही अच्छा है ।

अब बेचारा रंगा और भी दुखी हो गया । लेकिन कुछ दिनों में उसके मन में एक नया विचार आया । उसने दादी से यह सुन रखा था कि भूत कहानियाँ सुनने के शौकीन होते हैं । इसलिए वह एक दिन, रात में श्मशान चला गया । भूतों को मालूम हो गया कि वह कहानी सुनाने आया है । इसलिए श्मशान के सारे भूत उसके चारों ओर जमा हो गये । अपने चारों ओर इतने श्रोताओं को देख कर उसका भय जाता रहा और बहुत आनन्द से उन्हें कहानी सुनाने लगा । लेकिन एक घंटा होते होते वहाँ कोई भूत दिखाई नहीं पड़ा । वह कई दिनों तक रात को श्मशान जाता रहा । लेकिन उसे फिर एक भी भूत दिखाई नहीं पड़ा । तभी से गाँव में यह कहावत प्रचलित हो गई कि रंगा की कहानी से भूत भी भाग जाते हैं ।

इसी बीच राजधानी में राजा को मारने की कोशिश के आरोप में एक अपराधी पकड़ा गया । राजा के सिपाहियों ने उसे खूब मारा-पीटा और उससे असली षड्यंत्रकारी का नाम पूछा । लेकिन काफी प्रयास के बावजूद उसने कोई भेद नहीं बताया । राजा और उसके मंत्री इस बात से परेशान थे कि असली शत्रु का रहस्य अज्ञात है । तभी किसी ने राजा को सलाह दी कि इसे रंगा की कहानी सुना दी जाये तो शायद वह रहस्य खोल दे ।

''इतनी मार-पीट करने तथा तरह-तरह की पीड़ा पहुँचाने पर भी जो अपराधी मुँह नहीं खोल सका, वह कहानी सुन कर कैसे गुप्त भेद खोल देगा?'' राजा ने सन्देह व्यक्त किया । फिर भी कोई और उपाय न देख कर उन्होंने कहा कि प्रयास करने में हर्ज क्या है । और मंत्री को आदेश दिया कि रंगा को कहानी सुनाने के लिए तुरन्त बुला भेजो ।

रंगा राजा का यह सन्देश सुन कर बहुत प्रसन्न हुआ । उसने सोचा कि उसकी कहानी का स्थायी श्रोता मिल गया । क्योंकि अपराधी को काफी सताया गया है, और उसमें सहनशीलता आ गई है, वह उसकी कहानी को धैर्यपूर्वक अवश्य सुनेगा । लेकिन उसका यह विश्वास तब टूट गया जब एक

घंटा तक रंगा की कहानी सुनने के बाद राजद्रोह का अपराधी फूट-फूट कर रोने लगा । उसका अपने मन पर नियंत्रण न रहा और उसने सभी षड्यंत्रकारियों के नाम बता दिये ।

रंगा की सफलता पर राजा बहुत प्रसन्न हुआ । रंगा का राजकीय सम्मान किया गया । किन्तु रंगा बहुत उदास दिखाई पड़ा । उसने राजा से कहा, - ''यह तो मेरा अपमान है, सम्मान कहाँ? मेरी कहानी कोई ध्यान से सुने तभी मेरी सफलता मानी जायेगी । तभी मेरा सच्चा सम्मान माना जायेगा ।''

राजा ने तुरंत मंत्री को आदेश दिया कि रंगा के लिए ऐसा श्रोता पकड़ कर लाया जाये जो इसकी पूरी कहानी सुन सके । तब मंत्री ने कहा कि महाराज! जब इतना पीड़ित अपराधी भी इसकी कहानी सुन कर रो पड़ा तो सामान्य व्यक्ति में इतनी सहनशक्ति कहाँ कि उसकी पूरी कहानी सुन सके । इसलिए इस सम्बन्ध में ज्योतिषी से परामर्श करना श्रेयस्कर होगा ।

राजा ने आस्थान के ज्योतिषी को बुला कर यह समस्या रखी । उसने इस विषय पर बहुत मनन-अनुशीलन के बाद राजा से कहा, - ''महाराज ! रंगा की कहानी का श्रवण मानव मात्र के लिए असह्य और असम्भव है । इसके लिए भगवान की सहायता अनिवार्य है । रंगा अपनी कहानी को ताल पत्रों पर लिखता जाये और उसे पढ़ते हुए भगवान को समर्पित करता जाये । भगवान प्रसन्न होकर प्रकट होंगे और उसकी इच्छा पूरी करेंगे ।''

राजा ने रंगा के लिए एक पूजा-स्थल बनवाया तथा ढेर सारे ताल पत्रों का प्रबन्ध कर दिया । वह ज्योतिषी के निर्देशानुसार अपनी कहानी को ताल पत्रों पर बोलते हुए लिखने लगा और भगवान की प्रतिमा के चरणों में निवेदित करने लगा । कुछ ही

दिनों में भगवान प्रकट हो गये और बोले - "बस, बस, अब रुक जाओ । बोलो, तुम्हें क्या चाहिये ।"

"मेरा जीवन धन्य हो गया प्रभु । आपके दर्शन हो गये । इतनी कृपा करें कि मेरी कहानी का श्रोता मिल जाये ।" रंगा ने हाथ जोड़ कर प्रभु से प्रार्थना की ।

भगवान ने मन्द-मन्द मुस्कुराते हुए कहा, - "वत्स ! हर कार्य का समय निर्दिष्ट होता है । काल सबसे बलवान है । यथेष्ट काल में भगवान अवतार लेते हैं । त्रेता से पूर्व राम का अवतार संभव नहीं था और न द्वापर के पहले कृष्ण का अवतार । तुम्हें भी समय पर श्रोता मिल जायेगा । तब तक ताल-पत्रों पर अपनी कहानी लिखते जाओ ।"

"मेरी कहानी का श्रोता कब मिलेगा प्रभो?" रंगा ने विनीत भाव से पूछा ।

"एक नहीं, तुम्हें, समय आने पर, लाखों श्रोता मिलेंगे । तुम्हारे लिए लाखों श्रोताओं का प्रबन्ध मैं स्वयं करूँगा । लेकिन एक शर्त है । तुम मन ही मन, चुपचाप, बिना बोले कहानी लिखते जाओ । मुझे न सुनाओ ।" भगवान ने कहा ।

"आप जैसा कहते हैं, वैसा ही करूँगा । लेकिन यह बताइये कि मुझे श्रोता कब मिलेगा और कब तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी ।" रंगा ने बड़ी उत्सुकता से भगवान से प्रार्थना की ।

"अब से कुछ शताब्दियों के पश्चात भारत पर विदेशी शासकों का राज होगा । उनसे मुक्त होने के आधी शताब्दी बाद भारत में बहुरूपी नाम का एक यंत्र आयेगा । उसके माध्यम से तुम्हारी कहानी धारावाहिक नाटकों के रूप में प्रदर्शित होकर लाखों श्रोताओं का मनोरंजन करेगी । एक शताब्दी तक यह कहानी विविध नामों से श्रोताओं और दर्शकों के आकर्षण का केन्द्र बनी रहेगी । तुम्हारी कहानी को वर्तमान राजा भविष्य के लिए सुरक्षित रखेंगे । अपने भावी श्रोताओं - दर्शकों के लिए तब तक इन तालपत्रों पर अपनी कहानी लिखते रहो ।" यह कह कर भगवान अदृश्य हो गये ।

ताल पत्रों पर सुरक्षित रखी गई रंगा की उस कहानी का प्रदर्शन बहुरूपी यंत्र पर पिछले कुछ दशकों से आरम्भ कर दिया गया है ।

भुलक्कड़

एक गाँव में बासव नाम का प्याज का एक व्यापारी रहता था। एक दिन किसी काम से वह ग्रामाधिकारी से मिलने गया। मार्ग में उसने दो व्यक्तियों को झगड़ा करते हुए देखा। गाँव के बहुत लोग इकट्ठे होकर तमाशा देख रहे थे। बासव को मध्यस्थ बन कर झगड़ों का निपटारा करने का पुराना शौक था। इसलिए झट वह भीड़ को चीरता हुआ झगड़नेवालों के पास गया और उन्हें डाँटता हुआ पूछा, - "यह क्या हो रहा है, रास्ते पर झगड़ा क्यों कर रहे हो?"

झगड़नेवालों में एक का नाम रंगा और दूसरे का नाम मंगा था। रंगा ने कहा, - "जिस गाँव में मेरी ससुराल है, वहीं मंगा की भी है। कुछ महीने पूर्व मेरे साले ने इसे एक हज़ार रुपये उधार दिये और कहा कि वे रुपये मुझे लौटा देगा। लेकिन मंगा ने रुपये लौटाना तो दूर, इसकी चर्चा तक मुझसे नहीं की। अभी दो दिन पहले मेरे साले ने जब पूछा कि मंगा को जो मैंने हजार रुपये दिये थे उसने लौटाये कि नहीं, तब मुझे यह मालूम हुआ। अब मैं ब्याज के साथ रुपये माँग रहा हूँ और यह बेइमान देने से इनकार कर रहा है।"

मंगा ने हाथ जोड़ कर विनयपूर्वक कहा, "महोदय, यह सच है कि मैंने रंगा के साले से एक हजार रुपये लिये हैं। लेकिन मैं बेइमान नहीं हूँ। ससुराल से वापस आकर घर की अन्य समस्याओं में उलझ गया था, इसीलिए रंगा को यह बताना भूल गया था। मैं रुपये लौटाने से इनकार नहीं कर रहा हूँ, लेकिन यह ब्याज के साथ मांग रहा है। मैंने ब्याज पर रुपये उधार नहीं लिये थे। इसलिए ब्याज का प्रश्न उठाना उचित नहीं है। हाँ, भूल जाने के लिए माफी चाहता हूँ और हजार रुपये लौटाने को तैयार हूँ।"

"इतना कह देने से कि भूल गया, काम नहीं चलेगा। दस-बीस की बात नहीं, हजार रुपये की बात है। जरूर नीयत में खोट होगी।" रंगा ने कहा।

"एक हज़ार हो या एक लाख। जब स्मृति में

वि. उमादेवी

कोई बात न रहे तो लाखों का भी नुकसान हो जाता है। भूलने पर क्या नियम या कानून द्वारा नियंत्रण हो सकता है? वासव ने बीच बिचाव करते हुए कहा।

इस पर भीड़ में से किसी ने चिल्ला कर कहा, - "हाँ, हो सकता है शास्त्र द्वारा।"

वासव ने तब भीड़ पर एक तीक्ष्ण दृष्टि डाल कर रंगा को सुनाते हुए कहा, - "भुलक्कड़पन मनुष्य का एक स्वाभाविक दोष है। मेरी ही बात लीजिये। आज सवेरे नहाते समय गले का हार कुएँ के जगत पर रखा और उठाना भूल गया। अभी रास्ते में याद आया। उसका मूल्य दो हजार से अधिक है। यदि कोई पूछे कि हार क्यों भूल गये तो मैं क्या उत्तर दे सकता हूँ।"

फिर उसने रंगा और मंगा दोनों को समझा कर झगड़े का निपटारा कर दिया और अपने काम पर चला गया।

जब कुछ देर के बाद वासव घर लौटा तो उसकी पत्नी ने पूछा, "आप के गले का हार कहाँ है?"

"सवेरे नहाते समय कुएँ के जगत पर छूट गया था। वहीं होगा।" वासव ने बताया।

"अभी पन्द्रह मिनट पहले कोई आया था और यह कह कर हार माँग कर ले गया कि आपने उसे कुएँ के जगत पर से मँगवाया है।" उसकी पत्नी दुखी होकर बोली।

वासव ने समझा कि भीड़ में से किसी चालाक आदमी ने मेरी बात को सुन कर अनुचित लाभ उठाया है।

वह मन ही मन उदास हो कर सोचने लगा, - "मंगा के भुलक्कड़पन से रंगा का कुछ भी नुकसान नहीं हुआ। लेकिन मेरे भुलक्कड़पन से मेरा ही दो हज़ार का नुकसान हो गया।"

तभी एक युवक दौड़ता हुआ उसके पास आया और बोला, - "साहब, मैं रंगा के सेवक का बेटा हूँ। आप सचमुच गाँव के छोटे-मोटे झगड़ों को निपटाने में माहिर हैं। आपने सब के सामने अपने भुलक्कड़पन को स्वीकार कर लिया। अपना हार कुएँ पर छोड़ कर आने की आप की बात को जाँचने के लिए मेरे मालिक ने मुझे आपके घर पर भेजा और मैं झूठ बोल कर आप की पत्नी से हार ले भी गया। यह रहा आप का हार।"

इतना कह कर उसने वासव के हाथ में हार रख दिया और वह दौड़ता हुआ वापस चला गया।
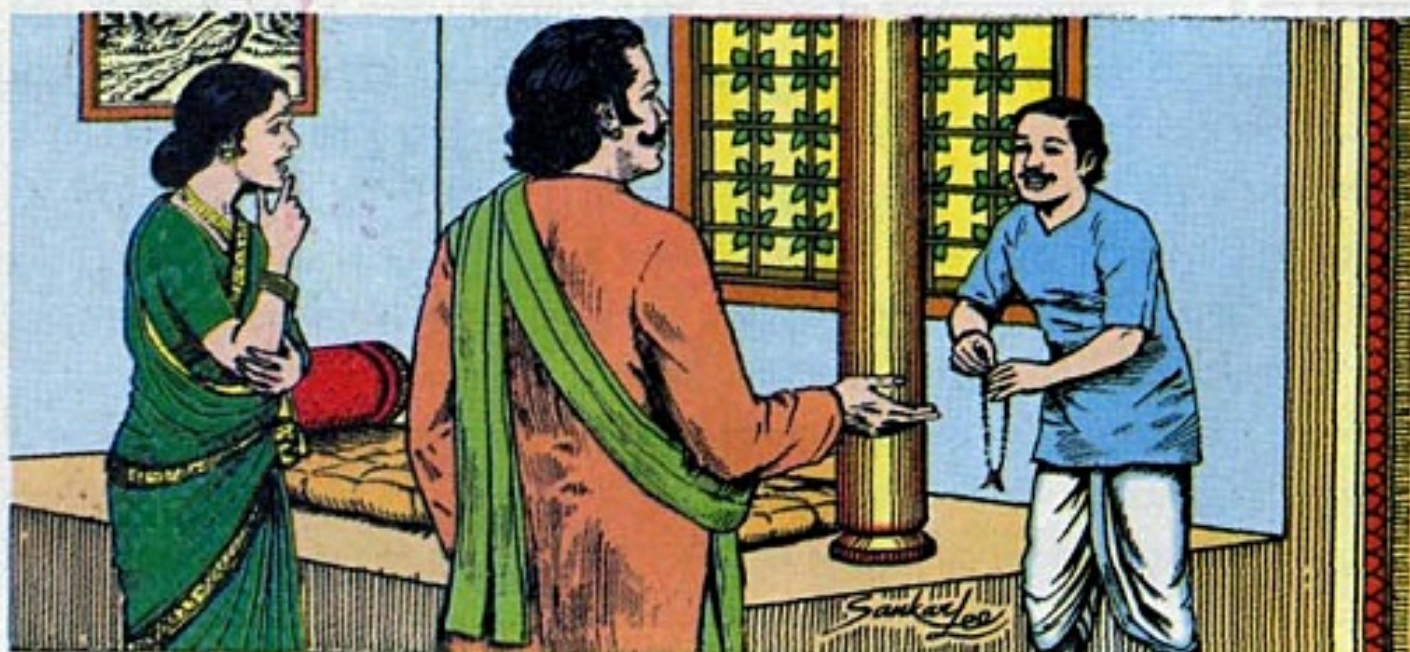
महाभारत

दूसरे दिन दुपहर तक कौरवों की ओर से अश्वत्थामा, कृप और शल्य ने पांडव वीर धृष्टद्युम्न तथा अभिमन्यु के साथ युद्ध किया। इसके बाद दुर्योधन के पुत्र लक्ष्मण और अभिमन्यु के बीच भयंकर द्वन्द्व युद्ध हुआ। इसमें लक्ष्मण को पराजित होते देख दुर्योधन तथा अन्य कौरव योद्धाओं ने अभिमन्यु को घेर लिया। अभिमन्यु निर्भयता के साथ सबसे संग्राम करता रहा। तभी उसकी मदद के लिए अर्जुन आ पहुँचा। उसे देख लक्ष्मण की सहायता के लिए भीष्म, द्रोण आदि महारथी आ गये। उस समय अर्जुन का सामना करना किसी के लिए संभव न था। वह प्रलय काल के रुद्र की भांति कौरव सेना को नष्ट करने लगा। कौरव सेना के कई योद्धा मारे गये और बाक़ी भाग खड़े हुए।

उस समय भीष्म ने द्रोण से कहा - ''इस प्रकार युद्ध करते समय अर्जुन के सामने कोई भी ठहर नहीं सकता। उसके भय से भागती हुई हमारी सेना को वापस लौटाना संभव नहीं है। इसके अतिरिक्त सूर्यास्त होने जा रहा है। लगता है कि आज के लिए अभी युद्ध समाप्त कर देना हमारे लिए ज्यादा अच्छा होगा।''

तीसरे दिन सवेरे कौरव सेनाएँ गरुड़ व्यूह में तथा पांडव सेनाएँ अर्द्धचन्द्र के व्यूह में कुरुक्षेत्र
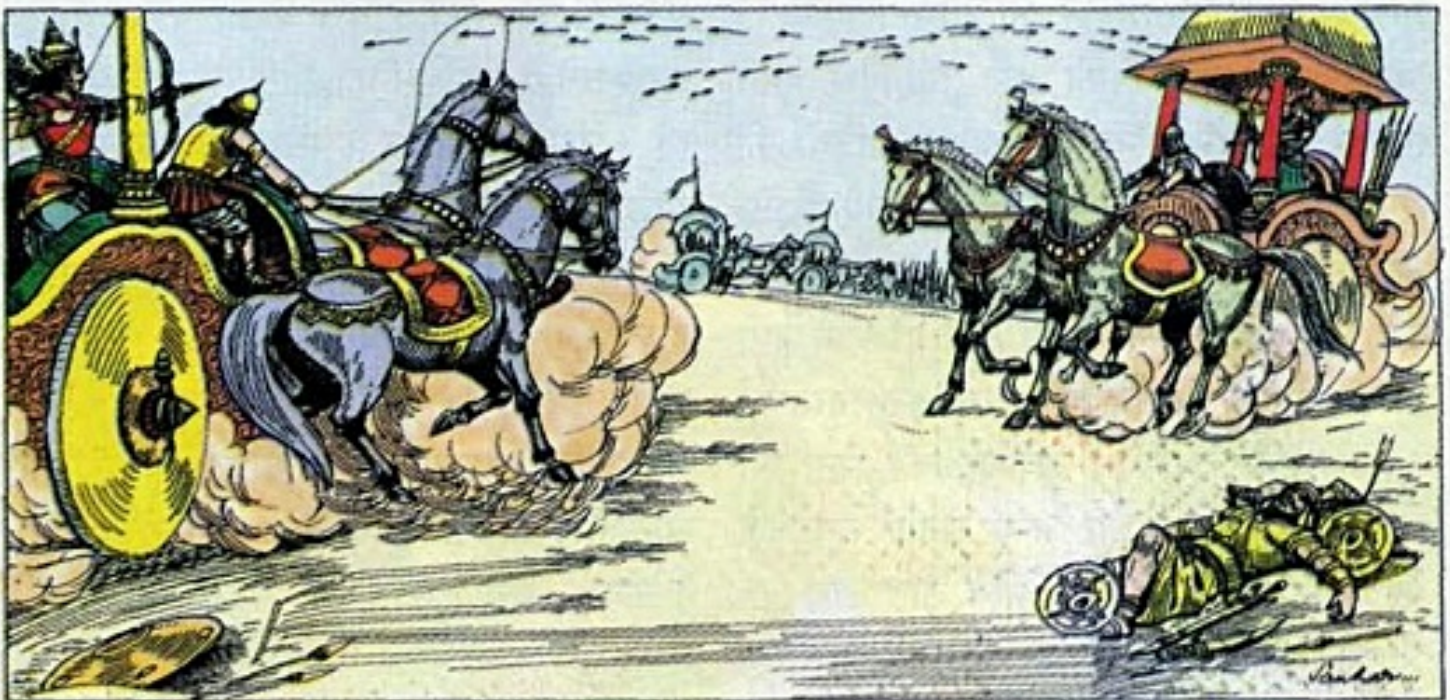
के मैदान में युद्ध के लिए सन्नद्ध हो गईं। युद्ध के प्रारंभ होते ही दुर्योधन ने अपनी रथ-सेना को साथ ले घटोत्कच का सामना किया । पांडव योद्धा भीष्म और द्रोण से जूझ पड़े । अभिमन्यु तथा सात्यकी ने शकुनि का सामना किया । अर्जुन रथ-योद्धाओं का बुरी तरह वध करने लगा । इसी प्रकार भीष्म और द्रोण पांडवों की सेना को निर्मूल करने लगे । मगर भीम और घटोत्कच मिल कर कौरव सेना को भगाने लगे । उस सेना को लौटाना भीष्म और द्रोण के द्वारा भी संभव नहीं हुआ । किन्तु यह काम दुर्योधन ने अकेले कर दिया । दुर्योधन की सेना को आते देख भागने वाली अन्य सेनाएँ लज्जा से भर उठीं और वे भी युद्ध करने लौट आईं ।

तब दुर्योधन ने भीष्म के पास आकर तीक्ष्ण और कटु शब्दों में कहा - ''दादाजी, आपके युद्ध-क्षेत्र में रहते हमारी सेनाओं का तितर-बितर हो जाना आपके लिए कितने अपमान की बात है? यदि आप पांडवों के प्रति ऐसी दया और सहानुभूति की भावना रखते हैं तो युद्ध के पूर्व ही कह सकते थे कि मैं पांडवों, सात्यकी तथा धृष्टद्युम्न के साथ युद्ध नहीं करूँगा । आप सब अपने पराक्रम के अनुरूप युद्ध न करेंगे तो मेरा क्या होगा? मैं तो आप लोगों के पराक्रम पर ही निर्भर हो कर महाभारत-युद्ध के लिए तैयार हो गया था । यह बात आप सदा याद रखिए ।''

भीष्म क्रोध की स्थिति में भी हँसते हुए बोले - ''मैंने तुम्हें कितनी बार बताया कि पांडवों को हराना इंद्र और देवताओं के लिए भी संभव नहीं है । मैं वृद्ध हूँ, फिर भी अपनी शक्ति भर लड़ रहा हूँ । मैं कैसे लड़ता हूँ, तुम और तुम्हारे समर्थक सब देख लो ।''

युद्ध में पांडवों का हाथ ऊँचा देख भीष्म क्रोध में आ कर अत्यंत क्रूरता के साथ युद्ध करने लगे । दुर्योधन की सारी सेना उनके साथ थी । उस दिन भीष्म के सामने आकर कोई भी योद्धा घायल हुए बिना वापस नहीं लौटा । पांडवों की सेना हजारों टुकड़ों में बिखर गई । कृष्ण और अर्जुन भी भीष्म को रोक नहीं पाये ।

भड़के जानवरों की भांति भागने वाले सैनिकों को देख कृष्ण ने अर्जुन से कहा - ''अर्जुन, अब तुम अपना प्रताप दिखाओ । तुमने मुझे वचन दिया था कि तुम्हारे सामने जो

भी कौरव आयेगा, सबको मार डालोगे । भीष्म को देख कर सारे योद्धा इस तरह भड़क कर भाग रहे हैं, मानों अपने सामने साक्षात काल को देख लिया हो ।''

''हे कृष्ण, रथ को भीष्म के सामने ले चलो । उस वृद्ध को अंतिम सांस तक पहुँचा दूँगा ।'' अर्जुन ने कहा । कृष्ण ने वैसा ही किया ।

भीष्म पर दृष्टि पड़ते ही अर्जुन ने उनके हाथ के धनुष को अपने बाण से तोड़ दिया । इस पर भीष्म ने अर्जुन की प्रशंसा करते हुए एक और धनुष को अपने हाथ में ले लिया और युद्ध के लिए ललकारा । दोनों के बीच भयंकर युद्ध होने लगा, फिर भी कृष्ण को लगा कि अर्जुन उत्साह के साथ युद्ध नहीं कर रहा है । इसलिए कृष्ण ने अपने मन में सोचा - ''अगर अर्जुन भीष्म के प्रति ऐसा आदर दिखाता है तो युधिष्ठिर की सेना का नाश होने में ज्यादा समय नहीं लगेगा । मुझे ही कवच धारण कर भीष्म का वध करके पांडवों का कार्य संपन्न करना होगा ।''

इस बीच सैकड़ों कौरव वीरों ने आकर अर्जुन को घेर लिया । उस हालत में सात्यकी अर्जुन की मदद के लिए आया । उसने भागने वालों को ठहर जाने की चेतावनी दी । तब कृष्ण ने सात्यकी से कहा - ''सात्यकी, जो भाग रहे हैं, उन्हें भाग जाने दो । मैं आज इन भीष्म, द्रोण और बाकी कौरव योद्धाओं का अपने चक्रायुध से वध करके युधिष्ठिर का पट्टाभिषेक करूँगा ।''

यों कह कर कृष्ण ने अपने चक्रायुध को कंधे पर रखा । घोड़ों की रासों को छोड़ जमीन पर कूद पड़ा । चक्रायुध लेकर अपने ऊपर

और कृष्ण को कस कर पकड़ लिया । वह कृष्ण से निवेदन करते हुए बोला, "कृष्ण, शांत हो जाइये । आपके सिवा पांडवों के रक्षक और कौन हैं? मैंने जो प्रतिज्ञा की है, उसका अवश्य पालन करूँगा । मैं अपने सम्बन्धियों व मित्रों को गवाह बना कर यह शपथ खाता हूँ कि मैं सारे कौरवों का नाश करके रहूँगा ।"

ये बातें सुनकर कृष्ण संतुष्ट हुआ और लौट कर रथ पर बैठ गया । उसने रासों को हाथ में लेकर शंख-ध्वनि की । तुरंत अर्जुन ने भयंकर युद्ध प्रारंभ कर दिया । उसके साथ भीष्म भूरिश्रवा, शकुनि आदि कौरव योद्धा युद्ध करने लगे । अर्जुन के बाणों ने कौरव-योद्धाओं के रथों, हाथियों तथा घोड़ों को विक्षत कर दिया । सभी कौरव योद्धा बुरी तरह घायल हो गये।
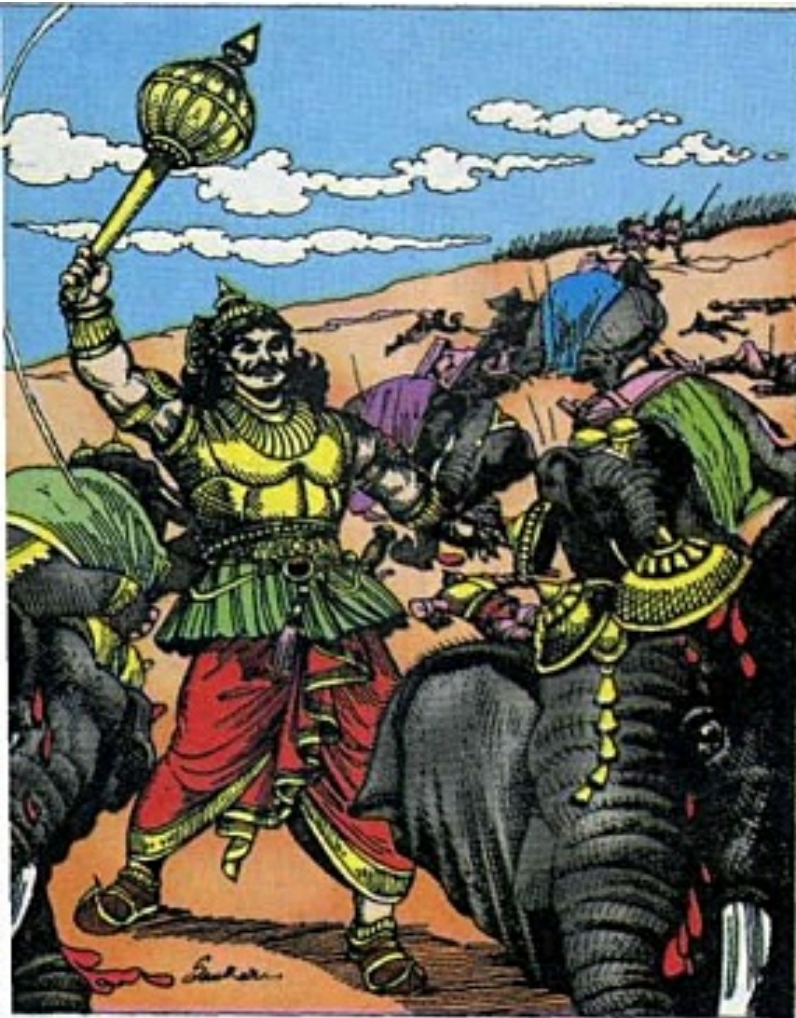
हमला करने आनेवाले कृष्ण से भीष्म ने शांत स्वर में कहा - "आओ कृष्ण, तुम्हारे हाथों से मरने में मुझे यश और आदर भी प्राप्त होंगे ।"

तब कृष्ण ने भीष्म के पास आकर समझाया - "प्रजा के नाश का कारण तुम्हीं हो ! धोखा दे कर जुआ खेलते समय तुम दुर्योधन को रोक नहीं पाये, और अब उसकी रक्षा करने निकले हो! वह वंश द्रोही अगर तुम्हारी बात न मानता था तो तुमने उसे त्याग क्यों नहीं दिया ?"

"राजा तो परम देवता होता है ।" भीष्म ने उत्तर दिया ।

"क्या यादवों ने कंस को छोड़ नहीं दिया? जिसकी बुद्धि उल्टा सोचती है, उसका विनाश निश्चित है ।" कृष्ण ने समझाया ।

इतने में अर्जुन अपने रथ से उतर आया

शीघ्र ही विराट, द्रुपद इत्यादि अर्जुन की मदद के लिए आ पहुँचे । सारा युद्ध क्षेत्र लाशों से पट गया । खून की नदियाँ बह उठीं । पांडवों ने विजय-घोष किये। अर्जुन ने ऐंद्रास्त्र का प्रयोग किया जिससे भीष्म, द्रोण, दुर्योधन आदि वापस मुड़ गये और कौरव सेनाएँ तितर-बितर हो गईं ।

उस दिन अर्जुन ने अपना अद्‌भुत पराक्रम दिखाकर कौरव योद्धाओं का बड़ा अपयश किया । युधिष्ठिर युद्ध समाप्त कर अपने शिविर को लौट गया ।

चौथे दिन प्रातःकाल कौरव सेनाओं का महासेनापति भीष्म अत्यंत क्रोध के साथ युद्ध के लिए तैयार हो गया । उसके पीछे द्रोण, दुर्योधन, बाह्लिक वगैरह वीर चल पड़े । उस

दिन पांडव सेना के आगे अर्जुन खड़ा हो गया ।

युद्ध के प्रारंभ होते ही भीष्म और अर्जुन ने एक दूसरे का सामना किया । द्रोण, कृप, शल्य, विविंशती, दुर्योधन तथा कुछ अन्य योद्धा भी अर्जुन पर टूट पड़े । उन सबका सामना अभिमन्यु ने किया । अर्जुन और अभिमन्यु की सहायता के लिए धृष्टद्युम्न आ पहुँचा । इसके बाद जो युद्ध हुआ, उसमें सांयम नामक योद्धा के पुत्र को धृष्टद्युम्न ने मार डाला ।

उस वक्त शल्य ने धृष्टद्युम्न पर हमला किया । दोनों ने दो घड़ी तक घोर युद्ध किया । इतने में अभिमन्यु शल्य पर टूट पड़ा । शल्य की रक्षा के लिये दुर्योधन, दुश्शासन, दुर्भर्षण, दुस्सह, दुर्मुख, चित्रसेन आदि ने अभिमन्यु को घेर लिया । तब भीम, धृष्टद्युम्न, उपपांडव, नकुल, सहदेव, अभिमन्यु इत्यादि दस लोगों ने दुर्योधन आदि दस लोगों के साथ युद्ध किया ।

उस युद्ध में भीम गदा ले कर शल्य पर टूट पड़ा । इसे देख दुर्योधन ने गजसेना को आगे रख कर भीम का सामना किया । भीम गर्जन करते गदा के साथ रथ पर से कूद पड़ा और अंधाधुंध हाथियों का वध करने लगा । बाकी नौ पांडवों ने पीछे से आकर उसकी रक्षा की । उस युद्ध में अनेक हाथी और गज योद्धा भी मारे गये। वह सेना मागध की थी । अतः मागध ने ऐरावत जैसे हाथी पर सवार हो उसे अभिमन्यु के रथ की ओर उकसाया । अभिमन्यु ने उस हाथी तथा मागध को भी बाणों का प्रहार करके मार डाला । इसके बाद भीम के प्रहारों से

घबराकर हाथी वापस मुड़ कर कौरव सेना को रौंदते भाग गये । तब भीम का वध करने आये कौरव वीरों तथा भीम की रक्षा करने वाले पांडव-वीरों के बीच घनघोर युद्ध हुआ । वह युद्ध देखते ही बनता था ।

पांडव वीरों में सबसे अधिक पौरुष दिखाकर युद्ध में कौरवों का संहार करने वाला व्यक्ति सात्यकी था । उसका सामना करने से हर कोई डर रहा था । ऐसी हालत में भूरिश्रवा ने उसके साथ टक्कर ली, मगर सात्यकी ने उसे भी घायल कर भगा दिया ।

उस वक्त दोनों दलों के योद्धाओं के बीच जो युद्ध हुआ, उसमें भीम ने प्रमुख स्थान ले कर लड़ते हुए धृतराष्ट्र के पुत्रों सुषेण, जलसंघ, वीरबाहु, भीमरथ और सुलोचन को क्रमशः मार

डाला । इस वीभत्स दृश्य को देख धृतराष्ट्र के बाकी पुत्र भाग गये।

भीष्म ने इस दृश्य को देख भीम को घेरने के लिए अपने महारथियों को आदेश दिया । उनमें भगदत्त, जो नरकासुर का पुत्र था, एक मत्त हाथी पर सवार हो, भीम पर हमला करने आया । तब अभिमन्यु वगैरह ने भगदत्त और उसके हाथी पर बाणों की वर्षा की । भगदत्त ने अपने घायल हाथी को पांडवों पर उकसाया और भीम पर एक बाण का प्रयोग करके उसे बेहोश कर दिया ।

इसे देख कर घटोत्कच को क्रोध आ गया । वह एक अन्य मत्त हाथी पर सवार हो भगदत्त से जूझ पड़ा । उनका युद्ध अत्यन्त भयंकर था । कौरवों ने समझा कि अब भगदत्त की मृत्यु निश्चित है । इसलिए उसकी मदद के लिए द्रोण, दुर्योधन कई योद्धा आ गये । इधर घटोत्कच की मदद के लिए भी कई पांडव योद्धा पहुँच गये ।

घटोत्कच की वीरता और युद्ध-कौशल को देख कर भीष्म को भी ईर्ष्या हो गई । उन्होंने द्रोण से कहा, - यह वीर बालक कितना अद्भुत और असाधारण पौरुष दिखा रहा है । उसकी रक्षा के लिए भी अनेक पांडव योद्धा तैयार हैं । हम लोग काफी थक गये हैं । इसलिए आज का युद्ध अब यहीं समाप्त करते हैं ।

यह बात सब को पसंद आई । इसलिए सभी वीर योद्धा युक्तिपूर्वक घटोत्कच के सामने से हट कर युद्ध क्षेत्र से जाने लगे । तब पांडवों ने शंखनाद कर भीम और घटोत्कच की प्रशंसा करते हुए अपने शिविरों में लौट गये । सब के चले जाने के बाद दुर्योधन अपने भाइयों की मृत्यु पर शोक में डूब गया ।

संजय के मुख से युद्ध का यह विवरण सुन कर धृतराष्ट्र ने कहा, "संजय, युद्ध में क्या होनेवाला है, यह सोचने मात्र से डर लगता है । मैं अपने पुत्रों की हार या उनकी मृत्यु के बारे में सुनना नहीं चाहता । कोई ऐसा उपाय बताओ जिससे पांडवों का नाश हो और मेरे पुत्र जीवित रहें ।"

जानवर ही भला

बहुत पहले की बात है। किसी गाँव में जसवंत नामका एक किसान रहता था। जसवन्त स्वभाव से बेहद लालची, स्वार्थी एवं निर्दयी था। उसके पास एक काली गाय थी। कुछ ही दिन पूर्व उसकी गाय ने एक सुन्दर से बछड़े को जन्म दिया था। जसवन्त बछड़ा पा कर तो बहुत प्रसन्न हुआ किन्तु लोभी स्वभाव का होने के कारण वह बछड़े को गाय का दूध नहीं पीने देता। गाय बेचारी अपने नन्हे से बछड़े को तरसती आँखों से देखती रह जाती और जसवंत सारा दूध स्वयं ले जाता। कुछ ही दिनों में बछड़ा मर गया। जसवंत दूध तो पाना चाहता था किन्तु गाय को ठीक से चारा नहीं देता, बल्कि उसे खेतों पर छोड़ देता। गाय शाम तक खेतों में चरती और संध्या समय घर लौट आती थी।

एक दिन शामको जसवंत की गाय घर नहीं लौटी। रात होने तक भी गाय का कोई पता नहीं चला। जसवंत गाँव के मुखिया से मिलने चला, क्योंकि खोई हुई गायों को ढुँढवाने की जिम्मेदारी मुखिया की थी। जसवंत ने मुखिया से कहा कि उसकी काली गाय खो गई है। दूसरे दिन मुखिया ने गाय को खोजने के लिए अपने आदमी भेजे। शाम को वे एक काली गाय को हाँक लाये।

''क्या यही तुम्हारी गाय है?'' मुखिया ने जसवंत से पूछा। खोजी गई गाय जसवन्त की नहीं है, यह जसवंत देखते ही समझ गया था। क्यों कि उसकी गाय बेहद दुबली-पतली थी, किन्तु सामने मोटी-ताजी सुन्दर गाय देख कर जसवंत लोभ में पड़ कर बोल पड़ा - ''जी हाँ, यही मेरी गाय है।'' मुखिया से अनुमति पाकर जसवंत गाय को अपने घर ले आया। वह मन ही मन बेहद प्रसन्न था। किन्तु उसकी प्रसन्नता अधिक देर नहीं रही। घर जाकर शीघ्र ही उसे ज्ञात हुआ कि यह गाय दुधारु नहीं है। अपनी भूल पर वह बहुत पछताया पर वह जानता था कि अब वह कुछ नहीं कर सकता, वह स्वयं मुखिया के सामने उस गाय को अपनी कह चुका था। निरुपाय सा उसने गाय को अपने घर बाँध लिया पर उसे दाना-पानी नहीं दिया। धीरे-धीरे चारे के अभाव में गाय सूख कर काँटा हो गई।

आलोक तिवारी

दर असल हड्डी-कट्ठी देख कर जसबंत जो गाय ले आया था वह रणधीर नाम के एक दूसरे किसान की थी। जब रणधीर की गाय दो दिन तक घर नहीं लौटी तो उसने भी मुखिया से फरियाद की कि उसकी गाय घर नहीं लौटी है।

मुखिया ने अपने नौकरों को आदेश दिया कि वे रणधीर की गाय को ढूँढ लायें। नौकर गाय ढूँढने निकल पड़े। आखिर उन्हें गाँव की सरहद के पास जसबंत की गाय दिखाई दी। नौकर उसे ही मुखिया के पास ले आये।

"क्या यही तुम्हारी गाय है?" मुखिया ने रणधीर से पूछा।

रणधीर ने देखा, गाय बहुत मरियल है किन्तु दुधारु है। उसने सोचा कि थोड़ी सेवा एवं देखभाल से वह सुपुष्ट हो जायेगी और अच्छी मात्रा में दूध देगी। यह सोच कर उसने मुखिया से कहा - "जी हाँ, यही मेरी गाय है।"

मुखिया ने उसे गाय घर ले जाने की अनुमति दे दी। अपने घर ले जा कर रणधीर ने मरियल गाय की खूब सेवा की, उसे अच्छी प्रकार से चारा-पानी देकर प्रेमपूर्वक उसकी देखभाल की। कुछ दिनों में गाय का रूप ही पलट गया। वह न केवल हृष्ट-पुष्ट हो गई बल्कि पहले से काफी ज्यादा दूध देने लगी। अपने स्नेही मालिक का स्नेह पाकर वह प्रसन्न दिखती थी।

उधर जसवंत के पास जो रणधीर की गाय थी, उचित दाना-पानी के अभाव में सूख कर काँटा हो गई।

कुछ दिन और बीत गये। इस बीच जसवंत को मालूम हुआ कि उसकी दुधारु गाय रणधीर के घर में है। वह तुरंत रणधीर के घर गया और उससे कहा - "हमारी गाएँ बदल गई हैं। गलती से मेरी दुधारु गाय तुम्हारे पास और तुम्हारी सूखी गाय मुझे मिल गई है। तुम मुझे मेरी गाय लौटा दो तथा मेरे यहाँ से अपनी गाय ले जाओ।"

"मुझे तो यह गाय मुखिया ने दिलवाई है, तुम्हें

जो कहना हो उनसे जा कर कहो ।'' रणधीर ने दो टूक उत्तर दिया ।

जसवंत ने मुखिया के पास जा कर विनती की - ''मुखिया जी, भूल से हमारी गाएँ बदल गई हैं, अपनी भूल जानते ही मैं आपके पास आया हूँ, कृपया न्याय कीजिए और मुझे मेरी असली गाय दिलवा दीजिए ।

मुखिया ने दोनों गाएँ मँगवा कर रणधीर से पूछा - ''क्या जसवंत का कहना सही है?''

इस पर रणधीर ने उत्तर दिया - ''हो सकता है, उसका कहना सही हो! मगर जसवंत के पास जो गाय है, उसकी हड्डियाँ निकल आई हैं, जब कि मैंने उसकी दुबली - पतली गाय को खूब दाना-पानी देकर मजबूत बनाया है । यदि जसवंत इस मरियल गाय को भी दृष्ट-पुष्ट कर दे तो मैं गाय बदलने को तैयार हूँ ।''

मुखिया जानता था कि रणधीर का कहना सत्य है । उसने जसवंत को एक महीने की मोहलत देकर रणधीर की गाय को मोटा-तगड़ा बनाने का आदेश किया । लाचार हो कर जसवंत रणधीर की गाय को वापस घर ले गया । उसने एक मास रणधीर की गाय को खूब खिला-पिला कर तगड़ा बनाया, और पुनःमुखिया के पास लेकर आया । उधर रणधीर भी जसवंत की गाय ले आया था ।

''अब तुम अपनी गाय को ले जा सकते हो । मुखिया ने जसवंत से कहा । यह सुन कर जसवंत अपनी गाय को लेने आगे बढ़ा, मगर गाय अपने स्थान पर अड़ी रही । जसवंत ने पुनः प्रयास किया, पर गाय थी कि टस से मस न हुई । इस पर जसवंत क्रोधित हो उठा । उसने क्रोध में आकर उसे लाठी से मारा । इस पर उसकी गायने जो उचित देख-भाल से हृष्ट-पुष्ट हो चुकी थी, आक्रामक रूप धर जसवंत पर अपने सींग से वार लिया । जसवंत अवाक् था ।

इस पर मुखिया ने फैसला किया - ''जसवंत, यह गाय तुम्हारे साथ नहीं जाना चाहती । हो सकता है कि यह तुम्हारी ही गाय हो, लेकिन यह तुमको अपना मालिक स्वीकार नहीं करती । तुमने उसे ठीक से चारा न कर, अन्याय किया है । महीने भर से तुम रणधीर की गाय की उचित देखभाल कर रहे हो । देखो, शायद वह तुम्हारे साथ चलने को तैयार हो जाये । आगे भी उसकी उचित देख-रेख करते रहना । उसके बछड़ा होने पर तुमको भी खूब दूध मिलेगा । इसलिए अब तुम उसे ही अपने साथ ले जाओ ।''

THE AMUL CHEESE BOY
IN PICNIC PANIC

One bright sunny day...

...a picnic is in progress.

Little Munnu Verma crawls away.
GURGLE

Suddenly, huge rocks come tumbling down the mountain.
RUMBLE

Amul cheese boy eats an Amul cheese slice...

...and becomes strong and powerful.

He smashes the falling rocks...
BANG

...reducing them to small pieces.
CRACK

Munnu is rescued and back with his family.

All thanks to the cheese that has more milk in it.

Amul cheese slices.
Amul cheese. Yes please!
Amul

चन्दामामा पेश करते हैं
परोपकारी समीर
चोर - वैरागी
चित्र : पाणी
समीर को अपने कुत्ते के साथ गंगापुर पहुँचने में काफी रात हो गई। गलियों में सन्नाटा था। सब दरवाजे बंद कर सो चुके थे। उसे प्यास लग रही थी। पानी माँगने के लिए वह एक घर का दरवाजा खटखटाने ही वाला था कि कुछ आवाज सुन कर रुक गया।
उसने एक दूसरे घर में दरवाजे के फाँट से झाँक कर देखा। दो व्यक्ति कंबल ओढ़ कर बैठे बात कर रहे थे।
समीर ने जब दरवाजा खटखटाकर पानी माँगा तो वे दोनों लेट गये।
उसे लगा कि यहाँ के ग्रामीण भी भयभीत हैं। वह वहाँ से गाँव के मन्दिर के निकट चला गया।
वहाँ तीन व्यक्ति शराब पी रहे थे और कुछ खा रहे थे।
"प्यासा हूँ। पीने के लिए पानी चाहिये।"
एक ने समीर से पूछा, - "तुम कौन हो?"
"मेरे पास इतना ही पानी है। इसे पी लो।"

समीर पानी पीकर चला गया और एक स्थान पर सो गया । सवेरे उठते ही उसने ग्रामीणों को कहीं जाते देखा । पूछने पर मालूम हुआ कि किसी वैरागी के दर्शन के लिए जा रहे हैं । यह भी पता चला कि ....
गाँव में लोगों के घर काफी चोरियाँ हो रही हैं । चोरियाँ रोकने के सम्बन्ध में ही वे वैरागी से बातें करेंगे । समीर को कुछ सन्देह हुआ । इसलिए वह भी उनके पीछे चल पड़ा ।
''जय शांभवी ! बेटा, तुम्हें क्या चाहिये ।''
उसने कहा, - ''शादी की इच्छा है ।''
वैरागी के शिष्यों ने उसे संकेत से कुछ बताया ।
''तेरी इच्छा पूर्ण होगा। तेरी शादी मैं स्वयं करा दूँगा ।''
शुक्रिया जी

भक्तो ! मैंने चोरों के बारे में देवताओं से बात की । वे तुम्हारे गाँव को चोरों से मुक्त कर देंगे । लेकिन इसके लिए अगले शुक्रवार तक उन्हें समय चाहिये । आप लोग निश्चिंत रहिये ।'' बैरागी ने ग्रामीणों को बताया । लोग बैरागी से आश्वासन पाकर चले गये । समीर गंभीरता से विचार करने लगा ।
सब चले गये, समीर की बुद्धि तेज़ी से काम करने लगी.
उस रात को समीर एक चट्टान के पीछे छिप कर बैरागी की हरकतों पर नजर रखने लगा । उसने देखा कि तीन हट्टे-कट्टे आदमी बोरों में माल लादे बैरागी के पास आ रहे हैं ।
उन तीनों ने बोरों में भरे आभूषण और अन्य माल आदि बैरागी को दिखाये ।
समीर वहां से गांव में आ गया ।
''बैरागी के दर्शन के लिए हिमालय के बहुत से साधु महात्मा आने वाले हैं । उनके लिए पंडाल लगाना, अन्य आवश्यक प्रबन्ध करना होगा । इसलिए सब अपनी कुदालें और कुल्हाड़ियाँ लेकर चलो ।
समीर के साथ ग्रामीण कुदालें और कुल्हाड़ियाँ लेकर बैरागी की ओर चल पड़े । बैरागी यह दृश्य देख कर घबरा गया । उसे घबराते - डरते देख कर ग्रामीणों को आश्चर्य हुआ ।
हम लोग आज फँस गये गुरु ।

तेरा भांडा फूट गया । तुम्हें जिन्दा गाड़ने के लिए ये सब सामान साथ लेकर आये हैं ।
क्यों ? ''क्या बात है?
''बेचारों को कब तक धोखे में रखोगे?'' यह कहते हुए समीर ने वैरागी की नकली दाढ़ी-मूछें खींच लीं । वैरागी का असली रूप प्रकट हो गया ।
ग्रामीणों ने वैरागी को खूब पीटा । समीर ने ग्रामीणों को उनके चोरी हुए आभूषण और माल वापस दिलवा दिये ।
कपटी और चोर वैरागी को उसके शिष्यों के साथ सजा दिलाने के बाद समीर अपने कुत्ते के साथ किसी अन्य गाँव में चला गया ।

चन्दामामा
'भारत की खोज' प्रश्नोत्तरी

इस अंक में दी गई प्रश्नोत्तरी के उत्तर अगले अंक में प्रकाशित किये जायेंगे । तब तक इनके उत्तर आप स्वयं खोजने की कोशिश करें और भारत के पुरा काल व परम्परा के ज्ञान से अपने को समृद्ध करें ।

1

१. अ. वह भारतीय वैज्ञानिक कौन था, जिसने कोपरनिकस से एक हजार वर्ष पूर्व यह कहा था कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है ।

आ. भारत में वह कौन-सा स्थान है जहाँ शिव लिंग कभी प्रकट होता है, और कभी अदृश्य हो जाता है ।

इ. प्राचीन भारतीय साहित्य के अनुसार वह कौन बालक था जिसने यमराज से यह ज्ञान प्राप्त किया कि मृत्यु के पश्चात हमारी चेतना कहाँ जाती है ।

ई. क्या प्राचीन भारत के तीन प्रसिद्ध नास्तिक दार्शनिकों के नाम बता सकते हो?

उ. वह राजा कौन था जिसने एक नया धर्म चलाया किन्तु उसे लोकप्रिय नहीं बना सका ।

2

प्राचीन काल में, जंगल में अनेक ऋषि रहते थे । उनकी संतानों में से एक युवा और एक युवती का शीघ्र ही विवाह होनेवाला था । लेकिन एक दिन युवती सर्पदंश से मर गई । युवक शोक में डूब गया । प्रेम के देवता की सहायता से वह मृत्युलोक में गया और अपनी प्रेमिका को खोज निकाला । मृत्यु-देवता ने उस पर प्रसन्न होकर युवक की शेष आयु का आधा जीवन उसकी मृत प्रेमिका को देकर उसे जीवित कर दिया । युवती को पुनः जीवन मिल गया ।

युवा और युवती का नाम क्या था?

सृजनात्मक स्पर्धाएँ

सुभद्रा का उपहास

प्रकाशन के लिए चुनी गयी मई महीने की कहावत पर आधारित कहानी - 'उधार का माल भारी पड़ता है'

चौकीदारों ने चोरों को पकड़ने में बड़ी चालाकी दिखायी । ग्रामाधिकारी ने उनकी भरपूर प्रशंसा की । ग्रामीणों ने भी ग्रामाधिकारी की खूब तारीफ़ की क्योंकि उन्हीं की सतर्कता के कारण यह संभव हो पाया । दुलहिन की तरफ़ के लोग अतिथि गृह में ठहरे हुए थे । दुर्भाग्य से उनके गहनों की चोरी हो गयी ।

जब उन्हें मालूम हुआ कि चोर पकड़े गये हैं और उनके गहने एकदम सुरक्षित हैं तो उनके आनंद की सीमा न रही । वे सब के सब ग्रामाधिकारी के घर आ पहुँचे । "आप हमारे गाँव में शादी के सिलसिले में आये । यह जानकर मेरा सर शर्म से झुक गया कि यहाँ आपके गहनों की चोरी हो गयी । इससे बढ़कर भला बदनामी और क्या हो सकती है? अब हम इस बदनामी से बाल-बाल बच गये । भगवान का लाख-लाख शुक्रिया । आप एक-एक करके मेरे पास आइये, अपने गहने का नाम, वजन बताइये । उसे पहचानिये भी । फिर उन्हें ले जाइये ।" ग्रामाधिकारी ने विवाह के अवसर पर आये दूसरे गाँव से आये अतिथियों से कहा ।

ग्रामाधिकारी के कहे अनुसार ही वे लोग एक-एक करके आये और अपने-अपने गहनों को ले गये । अब उसके पास एक गहना शेष रह गया । उसे लेने कोई नहीं आया । ग्रामाधिकारी ने उनसे पूछा "मेरे पास एक गहना पड़ा हुआ है । आपमें से क्या कोई उसका मालिक है?"

"क्यों नहीं साहब, है । उस कोने में बैठकर विलख-विलख कर जो औरत रो रही है, वही इस गहने की मालकिन है । यह क़ीमती गहना है । अपना यह गहना हमें बहुत बार दिखा भी चुकी ।" एक औरत ने सामने आकर कहा ।

ग्रामाधिकारी ने उस औरत को अपने पास बुलवाया । वह तो आ गयी, परंतु कुछ बोल नहीं पा रही थी । सिर झुकाकर चुपचाप आँसू बहाती जा रही थी । ग्रामाधिकारी ने उसे ढाढ़स बंधाते हुए कहा, "जिस गहने की चोरी हुई, वह तो मिल गया, फिर भी क्यों विलख-विलखकर रो रही हो? वजह क्या है ?"

फिर भी वह चुप रही और रोती ही रही । यह उस औरत के पति से देखा नहीं गया । उसने आगे आकर ग्रामाधिकारी से कहा, "यह गहना हमारी पड़ोसिन लक्ष्मी का है । मैं इससे बताता ही रहा कि उधार में गहना मत लाओ । पर इसने मेरी बात की परवाह नहीं की । यहाँ आने के बाद हर किसी को गहना दिखाती और उसकी तारीफ़ के पुल बांधती रही । भला उसे उसका वज़न, निशान कैसे मालूम हो, जब कि वह उसका गहना है ही नहीं । इसीलिए वह रो रही है ।"

ग्रामाधिकारी ने छानबीन की तो पता चला कि उस आदमी ने जो कहा, सब सच है । आख़िर सुभद्रा को उधार में लाया गहना उसे मिल गया । उसने मन ही मन निर्णय कर लिया कि आगे से वह कभी भी उधार में कोई क़ीमती चीज़ नहीं लायेगी । अगर गहना न मिलता तो मालूम नहीं, उसकी क्या दुर्गति होती ।

- के.के. राव

प्रचुर स्वर्ण

मल्यापुर नगर में रामदास नाम का एक ईमानदार व्यक्ति था । दो बेटों के साथ वह अपना विवाहित जीवन आनन्दपूर्वक व्यतीत कर रहा था ।

एक दिन अचानक उसकी पत्नी गंभीर रूप से बीमार हो गई और स्वर्ग सिधार गई । रामदास इस अप्रत्याशित आपत्ति से घबरा गया । उसके सामने एक बड़ी समस्या उपस्थित हो गई - छोटे-छोटे बच्चों की देखभाल कौन करेगा । उसने बच्चों को उनके मामा के पास रखने का निश्चय किया, जो एक दूरस्थ गाँव में रहता था ।

गाँव से जाने के पूर्व उसने अपनी पत्नी के मूल्यवान आभूषण और अपने सारे नकद रुपये अपने धनी पड़ोसी शैतान सिंह को देते हुए कहा, - "भइया, अपने बच्चों के भविष्य के लिए बस कुल यही मेरे पास है । कृपा करके इसे सुरक्षित अपने पास रख लो ।"

"घबराओ नहीं । तुम्हारा धन मेरे पास उतना ही सुरक्षित रहेगा जितना आकाश में सूरज ।" शैतान सिंह ने विश्वास दिलाते हुए कहा ।

लेकिन शैतान सिंह जितना धनी था, उतना ही कंजूस था । जब रामदास कुछ महीनों के पश्चात मल्यापुर वापस लौट आया और शैतान सिंह से अपने आभूषण और रुपये मांगे, तब शैतान सिंह ने उसे नकली आभूषण और खोटे सिक्कों से भरी एक सन्दूक दे दी । रामदास को शीघ्र ही पता चल गया कि वह बुरी तरह ठगा गया है । वह शीघ्र ही अपने बेटों के पास लौट आया और उसने शैतान सिंह के विश्वासघात की घटना उन्हें बता दी । कुछ ही दिनों में दिल पर भारी चोट लगने के कारण उसकी मृत्यु हो गई ।

कुछ वर्ष बीत गये । रामदास के दोनों बेटे होनहार युवक निकले । उन्होंने सोने का व्यापार शुरू किया और शीघ्र ही धनी बन गये । लेकिन शैतान सिंह की दुष्टता उन्हें अब भी याद थी । एक दिन वे अपने गाँव मल्यापुर के लिए चल पड़े ।

बड़े भाई के बाल लम्बे थे और दाढ़ी बढ़ी हुई थी। वह एक भिक्षु के बेश में मल्यापुर के पास से बहती नदी के आगे एक खंडहर मंदिर में ठहर गया।

छोटे भाई ने राजकुमार का बेश बना कर अपने नौकरों के दल के साथ रहने के लिए शैतान सिंह के

भवन के सामने वाले मकान को किराये पर ले लिया। वह 'राजकुमार' बड़े ऐशोआराम से रहता था और बड़ी उदारता के साथ दान देता था । जल्दी ही शैतान सिंह का ध्यान उधर गया ।

''यह युवक ऐसे विनोद भाव से पैसे लुटाता है जैसे किसान खेतों में बीज छिड़कता है । वह भिखारी को एक रुपया दे देता है, जब कि एक पैसा काफी है । हर शाम को गबैये उसे गाना सुना कर काफी इनाम ले जाते हैं । कितने दुःख की बात है कि जिस धन को तिजोरियों में बन्द रहना चाहिये, वह भिखारियों और गवैयों पर लुटाया जा रहा है ।'' शैतान सिंह ने सोचा ।

वह 'राजकुमार' से जाकर मिला और उसकी खुशामद करने लगा । 'राजकुमार' ने उसे बहुत सम्मान दिया । दोनों मित्र बन गये ।

एक दिन रात्रि में राजकुमार चिल्ला पड़ा, - ''चोर, चोर!'' पड़ोसी दौड़े हुए आये । युवक ने कहा कि कुछ चोर उसके शयन-कक्ष में घुस आये थे । वे स्वर्ण से भरी उसकी सन्दूकें ले जाना चाहते थे । उसकी नींद खुलते ही वे भाग गये ।

शैतान सिंह इस अवसर को हाथ से जाने देना नहीं चाहता था । जब पड़ोसी चले गये तब उसने राजकुमार से कहा, - ''सुनो राजकुमार, अब इस असुरक्षित घर में रहना बुद्धिमानी नहीं है । मैं तुम्हारा मित्र हूँ और मेरा घर महल के समान है । तुम मेरे साथ रहो । तुम्हारा धन मेरे घर में सुरक्षित रहेगा ।''

राजकुमार ने धन्यवाद के साथ उसका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया । तथाकथित सोने से भरी एक दर्जन सन्दूकें शैतान सिंह के घर में पहुँचाई गईं । राजकुमार को एक बड़े कमरे में ठहराया गया । उसी में उसकी सन्दूकें रखी गईं ।

अपने अतिथि की दौलत देख कर शैतान सिंह
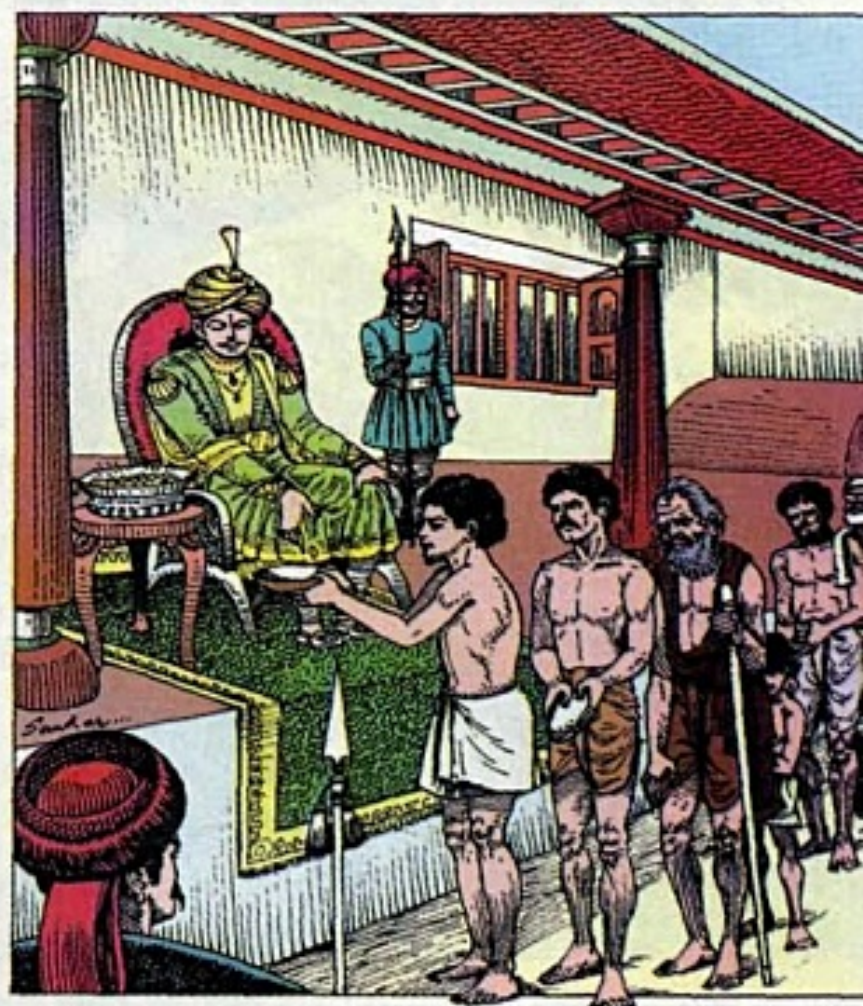
की खुशी का ठिकाना न रहा । अब उसे हथियाने की उसकी इच्छा और बलवती हो गई । वह रोज इसके लिए योजनाएं बनाने लगा । इस चिंता में उसे नींद नहीं आती थी ।

एक दिन शैतान सिंह को राजकुमार के सेवकों से यह पता चला कि वह बीमार हो गया है और कुछ भोजन नहीं ले रहा है ।

एक दिन सवेरे राजकुमार ने शैतान सिंह को बुला भेजा और धीमी और टूटती आवाज में बुदबुदाया, - ''मैं अब कुछ ही दिनों का मेहमान हूँ। मुझे सपने में आदेश मिला है कि मैं सारा धन गाँव के उजड़े मन्दिर में रहनेवाले फकीर को दे दूँ । क्या आप मेहरबानी करके उसे यहाँ बुला देंगे?''

शैतान सिंह ने मन्दिर वाले फकीर के बारे में यह सुन रखा था कि वह सुबह शाम एक पाँव पर बहुत देर तक खड़ा रहता है, उसमें सांसारिक

वस्तुओं के प्रति मोह नहीं है और उसे भक्तों से जो भी भेंट आती है, वह उसे गरीबों में बाँट देता है ।

शैतान सिंह उस फकीर के पास तुरन्त चला गया और उससे विनयपूर्वक मरनासन्न राजकुमार से आकर मिल लेने तथा उसकी अन्तिम इच्छा पूरी करने की प्रार्थना की ।

''मुझे उसकी अन्तिम इच्छा पूरी करने में कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन समस्या यह है कि मैं सोने का मूल्य नहीं जानता । इसके अतिरिक्त क्या इस एकान्त मन्दिर में उसे रखना सुरक्षित रहेगा?''

''आप घबराइये नहीं । मैं सोने का मूल्य जानता हूँ । यदि आवश्यकता हुई तो मैं आप की ओर से उसे बेचने का दायित्व लेता हूँ । जहाँ तक उसकी सुरक्षा का प्रश्न है, मैं उसे अपने घर में रखने को तैयार हूँ । और यदि आप भी मेरे घर में मेरे साथ रह सकें तो मैं इसे अपना गौरव मानूँगा ।'' शैतान सिंह ने फकीर के प्रति झूठा आदर और प्रेम दिखाते हुए कहा । बेचारा दयालु फ़कीर इस प्रस्ताव को मानने के सिवा और कर ही क्या सकता था । वह शैतान सिंह के साथ उसके घर पर आ गया और थोड़ा संकोच करने के बाद उसने मरनासन्न 'राजकुमार' की सारी सम्पति दान स्वरूप स्वीकार कर ली और उसे अपना आशीर्वाद दिया ।

लेकिन आश्चर्य ! राजकुमार मरने की बजाय वह फकीर के चमत्कारी आशीर्वाद के प्रभाव से तुरन्त स्वस्थ हो गया । और फ़कीर के साथ-साथ वह भी संसार के सर्वोत्तम स्वादिष्ट भोजन और व्यंजन खाने लगा । बेशक, शैतान सिंह के खर्च पर ।

कुछ दिनों के पश्चात राजकुमार अपने राज्य में वापस लौट जाने की तैयारी करने लगा । उसने फकीर से अपने साथ चलने का अनुरोध किया । फकीर जाना तो चाहता था, लेकिन सोना को बेचे बिना जा नहीं सकता था ।

शैतान सिंह ने अपने लाभ के लिए फकीर से कहा, - ''क्योंकि आप को जल्दी है, इसलिए आप को बाजार जाकर सोना बेचने के लिए मोल-भाव करने के झंझट से बचाने की दृष्टि से मैं ही इसे खरीद लेता हूँ । आप लोग इतने अच्छे हैं कि बाजार से अधिक मूल्य देने में भी मुझे कोई दुख नहीं होगा ।''

''आप सचमुच कितने दयालु हैं ?'' फकीर ने कहा ।

शैतान सिंह की बाछें खिल रही थीं । उसने सभी सन्दूकों के स्वर्ण के बदले उसके मूल्य का सिर्फ दसवाँ हिस्सा चुकाया । लेकिन वह भी इतना अधिक था कि उसके बाद उसके पास एक कौड़ी भी न बची ।

एक घंटे के बाद राजकुमार और फकीर उससे विदा लेकर चले गये । शैतान सिंह सोने का एक टुकड़ा दिखाने के लिए सुनार के पास ले गया ।

"तुम इसे सोना समझ कर लाये हो क्या? हहा! फिर तो तुम्हें मक्खी और बाज में भी कोई फर्क नहीं दिखाई देगा । ह हा ! ह हा !!" सुनार ने उसका मजाक बनाते हुए कहा ।

शैतान सिंह को यह जानकर बड़ा धक्का लगा कि जो सोना उसने लाखों में खरीदा है, वह मुश्किल से चन्द सिक्कों से अधिक के लायक नहीं है । वह लुट चुका था ।

कोई और उपाय न देख कर वह न्याय के लिए राजा के पास गया और अपनी दुख भरी कहानी सुनाई । राजा ने तुरत दो परदेशी व्यक्तियों को खोज कर लाने का आदेश दिया । वे दोनों अभी नगर में ही थे और बड़ी खुशी से राजा के दरबार में हाजिर हो गये ।

मुकदमे की सुनवाई शुरू हुई ।

"मैंने अपना सोना किसी को नहीं बेचा । मैंने तो इसे फकीर को दान में दे दिया, क्योंकि उसके आशीर्वाद ने मुझे मौत के मुँह से बचा लिया । उस सोने से मेरा लेना-देना कुछ नहीं है, क्योंकि वह फकीर का हो गया ।" राजकुमार ने अपना बयान दिया ।

राजा को यह बयान उचित और युक्तियुक्त लगा।

"मैंने शैतान सिंह को पहले ही स्पष्ट कह दिया था कि मेरे लिए सोना और पत्थर एक समान है, क्योंकि मुझे सोने का मूल्य नहीं मालूम है। शैतान सिंह ने ही सोने को स्वयं खरीदने का प्रस्ताव रखा। उसी ने स्वयं उसका मूल्य निश्चित किया । मैंने उसका दिया हुआ सारा धन गरीबों में बाँट दिया।" फकीर ने अपना बयान देते हुए कहा ।

राजा को इसका बयान भी काफी उचित और अकाट्य लगा ।

राजा ने निर्णय सुनाते हुए कहा, "शैतान सिंह! मुझे खेद है कि मैं इसमें कुछ नहीं कर सकता । यह बड़ी विचित्र स्थिति है । राजकुमार को दान में दी हुई चीज के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। फकीर को भी दोषी ठहराना उचित नहीं है, क्योंकि तुमने स्वयं खरीदने के लिए पहल की । तुमने ही मूल्य निर्धारित किया । यह देखना तुम्हारी जिम्मेदारी थी कि जो कुछ तुम खरीदने जा रहे हो, वह सोना है कि नहीं ।"

दोनों नवागन्तुकों ने राजा को धन्यवाद दिया और घर लौट गये ।

चित्र
कैप्शन प्रतियोगिता

क्या तुम कुछ शब्दों में ऐसा चित्र परिचय बना सकते हो, जो एक दूसरे से संबंधित चित्रों के अनुकूल हो? तुम एक सामान्य पोस्टकार्ड पर इसे लिख कर इस पते पर भेज सकते हो :

चित्र परिचय
प्रतियोगिता
चन्दामामा
वडपलनि
चेन्नै - 600 026

जो हमारे पास इस माह की 25 तारीख तक पहुँच जाए। सर्वश्रेष्ठ चित्र परिचय पर 100/-रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा, जिसका प्रकाशन अगले अंक के बाद के अंक में किया जाएगा।

जून अंक के पुरस्कार विजेता हैं :

कु. श्वेता सुमन
ग्रा. पो. - मधुरापुर, जिला -
समस्तीपुर, बिहार - 848 101

विजयी प्रविष्टि :

"जल्दी-जल्दी केले खा कर
मम्मी से बोलो साग ले लो आ कर"